॥ श्रीश्रीगौरहरिर्जयति ॥

गौड़ीयग्रन्थगौरव:—

प्रकाशितग्रंथसंख्या—११५—११६

श्रीमाधवदासजी की वाणी

तथा

आदर्शजीवनी

अर्थसहायक—
बाबा श्रीगौरगोविन्ददासजी के शिष्यगण

सम्वत्—२०२०
मूल्य— १)

प्रकाशक: व मुद्रक:—
कृष्णदासबाबा

गौरहरिप्रेस, कुसुमसरोवर

भूमिका

—०—

प्रस्तुत बाणीकार श्री माधवदासजी के बारे में भक्तमालकार श्रीनाभाजी एवं भक्तमाल-टीकाकार श्रीप्रियादासजी ने अपने उन ग्रन्थों में परिचय दे कर विशेष प्रकाश डाला है। भक्तमाल के ७० संख्यक छप्पय में नाभाजी ने कहा है—

पहले बेद बिभाग कथित पुरान अष्टदस।
भारतादि भागवत मथित उद्धारयौ हरि जस।
अब सोधे सब ग्रन्थ अर्थ भाषा बिस्तारयौ।
लीला जै जै जैति गाय भव पार उतारयौ॥
जगन्नाथ इष्ट वैराग्य सींव करुनारस भीज्यौ हियो।
बिनै ब्यास मनो प्रगट ह्वै जग को हित माधो कियो॥

अर्थात पहिले बेद-ब्यासजी ने बेद का विभाग, अठारह पुराण, महाभारत-एवं भागवत की रचना कर उनका मथन के द्वारा हरि जस का उद्धार किया। अब वे माधवदास रूप में प्रकट होकर उन समस्त शास्त्रों का सोधन कर भाषा में उन सब का अर्थ विस्तार से लिखने लगे जिसका गान कर सब कोई भवसागर से उतर गये। जगन्नाथ जी जिन के इष्ट थे जिन्होंने वैराग्य-सीमा का आचरण कर दिखलाया तथा जिन का हृदय करुणारस में भीजा हुआ था। मानो जगत के हित के लिये वेदव्यासजी का मन माधवदास जी रूप में प्रकट हुआ। प्रियादासजी ने भक्तिरसबोधिनी टीका में (३१५-३२६) वारह कवित्त में उनको करुणामय जीवन का विस्तार पूर्वक लिखा। वे जाति के ब्राह्मण थे। स्त्री की मृत्यु हो जाने पर उनके मन में प्रवल वैराग्य आ गया। यद्यपि पुत्र को पालन करने

का भार उन पर आ पड़ा तो भी प्रभु ही सबका पालन करते हैं जो पालनादि में अपने को अभिमान रखता है वह मूर्ख है ऐसा मन में सोच कर गृहादि त्याग कर नीलाचल श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्र में आकर समुद्रतट में निवास करने लगे। क्षुधा पिपासा का विचार न करते हुए श्री जगन्नाथ के भजन में जुट गये। एकबार बिना कुछ खाये उन को तीन दिन बीत गये परन्तु तनिक भी पीड़ानुभव नहीं हुआ। श्रीजगन्नाथ जी बड़े सोच विचार में पड़ गये। आपने लक्ष्मी जी के द्वारा शयन भोग की बस्तुओं को भेजा। लक्ष्मीजी सोने के थाल में भोग लेकर पैरों के नूपुरों की झन झन ध्वनि से दिशाओं को झमकाती हुई पहुँची। माधवदासजी ध्यानमें इस प्रकार मग्न थे कि उन को कुछ प्रतीत न हो सका केवल बिजली सी चमक का अनुभव हुआ। लक्ष्मी जी सामने में थाल धर कर चली गई पश्चात में उन्होंने जगन्नाथजी का प्रसाद देखकर अत्यन्त प्रसन्नता के साथ भोजन किया एवं वहाँ ही थाल रख दी। उधर प्रातः काल होने पर पुजारियों ने थाल न देखकर इधर उधर ढूढ़ने लगे उन्होंने माधवदासजी के सामने थाल देख कर उन को पकड़ लिया एवं वेतोंसे प्रहार किया। वैंत के वे प्रहार जगन्नाथ जी के श्री अंग में उखड़ आये। तदुपरान्त श्रीजगन्नाथ जी के निर्देश के अनुसार वे सब भयभीत हो गये एवं माधवदासजी से क्षमा प्रार्थना करने लगे। तब से माधवदासजी की कीर्त्ति जगह जगह फैल गई। वे अपनी प्रशंसा सुनकर लज्जित हो सिर झुका लेते। माधवदासजी ध्यान में इस प्रकार निमग्न हो जाते थे। कि उन्हें शरीर का ध्यान नहीं रहता था, कभी कभी वे मन्दिर में रह जाते थे कि किसी को खबर नहीं पड़ता था। एकबार शीतकाल के दिन आप मन्दिर में उघाड़े रह गये, जब रात्रि को ठंड अधिक लगी तब बजाय उनके स्वयं जगन्नाथ जी काँपने लगे। आपने स्वयं अपनी रजाई माधवदास जी को ओढ़ने को दे दी।

एकबार माधवदासजी को संग्रहणी हो गई थी, समुद्र के किनारे पड़े हुए थे, दस्त अधिक बढ़ जाने पर बार-बार जल का आवश्यक पड़ा। आप उठने में अशक्त थे। तब जगन्नाथ जी सेवक रूप बन कर हाथ में जल पात्र ले कर उपस्थित हो जाते थे। आपने अपने कर कमलों से उन के मल-मूत्र से सने हुये शरीर का धौत किया करते थे। प्रभु अपने भक्तवात्सल्य में आकर अपनी ईशता को भी भूल जाते हैं। माधवदास जी की कीर्त्ति जब चारों ओर फैल गई तब वे प्रसिद्धि के भय के मारे एक स्थानमें न रहकर भिक्षा माँगने लग गये। एक दिन भिक्षा करते हुए एक बाई के घर पहुँचे एवं भिक्षा माँगने लगे बाई ने खीझकर पोता फेंक के मारा। वे पोता लेकर चल दिये। पोताके कपड़े को साफ कर बत्ती बनाकर जगन्नाथ जी के दीपक में लगा दिये। और दिनों से उस दिन मन्दिर में अधिक प्रकाश हो उठा तब तो उस बुढ़िया के हृदय का अंधकार (अज्ञान) दूर हो गया। उसने माधवदास जी के पाँव पकड़ कर क्षमा प्रार्थना की। एकबार एक प्रकांड पण्डित दिग्विजय करते हुए पुरी में पहुँच कर पण्डितों को शास्त्रार्थ के लिये बुलाया। पण्डितों ने माधव दासजी के पास उसे भेज दिया। वहाँ पहुंच कर उसने शास्त्र विचारार्थ माधवदासजी को पीड़ित किया। माधवदासजी शास्त्रार्थ किये बिना "हम हारे आप जीते" यह लिख कर दे दिये। उस पण्डित ने पत्र लेकर काशी पहुँच कर पण्डितों को दिखाया। तो उस में लिखा था कि माधवदासजी जीते पण्डित हारा। तब वह पण्डित रीस कर पुन: जगन्नाथपुरीमें आकर माधवदास जी से शास्त्रार्थ के लिये ललकारा। माधवदास जी पहले की तरह 'तुम जीते मैं हारा' ऐसा लिख दिये। पण्डित ने कहा तुम गधे पर चढ़ो। तुम्हारे कानों में जूतियाँ बांध कर समस्त शहर में तुम को घुमाया जावेगा। माधवदासजी ने "स्नान कर आता हूँ" ऐसा कह कर चल दिये। तब श्रीजगन्नाथजी माधवदासजी का रूप

धारण कर वहाँ आ गये। उन्होंने उस पण्डित को जीत कर गधे पर चढ़ाकर और कानों में जूतियाँ बाँधकर समस्त शहरमें फिराया। श्रीमाधवदास जी पुरी धाम में निवास करते हुए श्रीकृष्ण की व्रज लीलाओं का गान किया करते थे। वृन्दावन दर्शन के लिये आप की इच्छा हुई। बृन्दावन के लिये आप चल दिये मार्ग में एक गाँव आया। वहाँ एक भक्ता बाई रहती थी आप उसके अतिथि बने। बाई ने रसोइ करवा कर बड़े प्रेम से प्रसाद पवाया। प्रसाद पाने के समय बाई ने देखा कि माधवदासजी के सामने एक सुन्दर श्यामल बालक खड़ा है। उसे देखकर बाई के आखोंसे आँसू आने लगी। माधवदास जी ने उस का कारण पूछा। बाई ने कहा कि यह श्यामल सुन्दर बालक किसका है जो आप बहका लाये। इसके बालक के बिना इसकी माता कैसे जीवित रहेगी। माधवदास जी समझ गये कि श्री कृष्ण ने वालक रूप से बाई को दर्शन दिये।

अब माधवदासजी वहाँ से चलकर एक दूसरे गाँवमें पहुंचे। वहाँ एक महाजन भक्त रहता था। जिसकी भेट पुरी में माधवदासजी से हुई थी। उस समय उसने अपने घर में आने की प्रार्थना की थी। माधवदासजी उसके घर आये। परन्तु वह दैवयोग से अन्यत्र कहीं चला गया था। उस की भक्तिमती स्त्री ने माधवदास जी का बड़ा सत्कार किया। माधवदास जी वहाँ से चल दिये। बाद में वह महाजन आयकर सुना कि माधवदास जी आये थे। तव उसने मिलने को दौड़ा। अपने घर लौट चलने की माधवदास जी से प्रार्थना की माधवदास जी उसे समझा बुझा कर घर भेज दिये। अब माधवदास जी बृन्दावन आ गये। बृन्दावन की मन मोहन शोभा का दर्शन किया। एक दिवस आप विहारी जी के दर्शन में आये। एवं चनों का भोग धरा कर पाने लगे। श्री स्वामी जी ने अनेक प्रकार के भोजन बनाकर विहारी जी का ध्यान किया। विहारी जी बोलने लगे कि माधवदास जी ने चना भोग धराया

हमें अरुचि हो गई। तुम उनको बुलाकर मेरा प्रसाद ग्रहण कराओ। तब स्वामी जी माधवदासजी को ढूढ़ लिये। उन्हें प्रसाद पवाया। बृन्दावन में कुछ दिन निबास कर आप ब्रज की अन्य-लीला स्थलियों का दर्शनार्थ चल दिये। आप भांडीरवट में पहुँचे। वहाँ खेमदास करके एक साधु रहता था। उसके वहाँ आप अतिथी हुए उसने रात में रूखा-सूखा भोजन दे छिपा कर खीर खाने की चाही। जब कि उसने अपने लिये खीर परोसी तब उसने देखा कि खीर में हजारों कीड़े रम रहे हैं। बह समझ गया कि माधवदास जी से कपट करने का यह परिणाम है। तब तो उसने माधवदास जी से क्षमा प्रार्थना की। बृन्दाबन से माधवदास जी हरियाना में पहुँचे वहां किसी आश्रम में कुछ दिन रह कर लीलाओं का श्रवण करने लगे। उस आश्रम में गायों का गोबर थापते थे। जब वहां के रहने वाले सन्तों का "यह माधवदास है" ऐसा पता चल गया तब वे पुनः नीलाचल के लिये लौट गये। उनका अधिकांश जीवन जगन्नाथपुरी में बीता। प्रेमावतार महाप्रभु श्रीगौरांगदेब के परमगुरु श्रीमाधवेन्द्र पुरी ही माधवदासजी के दीक्षागुरु थे। महाप्रभु के दीक्षा गुरु श्रीपाद ईश्वरपुरी थे। इस नाते से माधवदासजी महाप्रभु के चाचा गुरु लगते हैं। निःसन्देह माधवदास जी की उम्र महाप्रभु की उम्र से अधिक थी। उन्होंने नीलाचल में रह कर महाप्रभु की लीला-खेला का सरस अनुभव किया था। ब्रजभाषा के प्रसिद्ध वाणीकार श्रीहरिराम व्यासजी एवं उन के पिता सुमोखन शुक्लजी उन माधवदास जी के शिष्य थे। दोनों ही उन से कृष्णमन्त्र की दीक्षा ली थी। हरिरामव्यासजी के शिष्यत्व सम्बन्ध में साम्प्रदायिकता के कारण कुछ भ्रान्तधारणा फैल गई। जिसका मूल कारण रसिक अनन्यमाल नामक एक कल्पित पुस्तक है। यह एक भक्तिमार्ग में चलने वाले महानुभावों की शुद्ध ऐतिहासिक जीवनी में बिरोध डालने

वाली पुस्तक है। जिसको भूतपूर्व गोस्वामी रूपलाल ने आगरा के हरजी बणीया के द्वारा मत्सरता से लिख कर एवं भगवंतमुदित जी जो कि गौड़ीय सम्प्रदाय के अनुगत है उन के नाम से आरोपित करके कुछसंख्या में हस्तलिखित प्रस्तुत करा कर उन कापियों को यत्र तत्र लाईब्रेरियों में रख दी। उस में नाना कल्पना की गई। उसमें सब से अधिक कल्पना यह है कि-श्रीचैतन्यमहाप्रभु के परिकर व शिष्य श्रीप्रबोधानन्दसरस्वती जी, पूर्वोक्त हरिरामव्यास जी आदि महानुभाव श्रीहितहरिवंशजीके शिष्य हुए हैं। उस में स्वामी हरिदासजी को भी हरिवंश जी के अनुगत होना बतलाया गया है। अस्तु हरिरामव्यास जी ने नवरत्न व स्वधर्म पद्धति नामक एक ग्रन्थ संस्कृत में लिखा है जिस का प्रकाशन सम्बत् २००६ में हो भी गया है। स्वयं व्यास जी उस ग्रन्थ में अपनी गुरुपरम्परा इस प्रकार देते हैं-

"लक्ष्मीपतिस्ततः श्रीमान्माधवेन्द्रयतीश्वरः।

ईश्वरस्तस्य माधोश्च राधाकृष्णप्रियोऽभवत्।
तस्याहं करुणापात्रं हरिरामाभिधोऽभवमिति" ॥

लगभग तीन सौ वर्ष पहले श्रीनिवासआचार्य प्रभु के परम प्रसिद्ध शिष्य श्रीलालदास महोदय ने वंगभाषा में पयारादि छन्द से नाभाजी कृत भक्तमाल का आधार लेकर अति सुन्दर भक्तमाल लिखी है। उस में कहा गया है:—

"श्री मन्माधवेन्द्र पुरी गोस्वामीर।
शिष्य श्री माधव नाम शिष्य शान्त धीर॥
ताँर शिष्य श्रील हरिराम जे गोसाञि।
अतएव तार वंश माध्वी सम्प्रदाइ॥

वृन्दाबनकथा नामक पुस्तक के २३६ पृष्ठ पर पुलिनविहारी दत्तजी लिखते हैं—

देखिये "बुन्देलखण्डेर अन्तर्गत ओडछा बा ऊर्चा ग्रामे हरि-रामव्यास नामे एक जन ब्राह्मण बास करितेन। तिनि माधवेन्द्रपुरीर शिष्य श्री माधबनामक एक जन सन्यासीर निकट मन्त्र ग्रहण करिया वैष्णवधर्मे दीक्षित छिलेन इत्यादि"

व्यास जी के ठाकुर युगलकिशोर जी बृन्दाबनस्थ किशोरी बन (व्यासघेरा) में विराजमान हैं। व्यासवंशी गोस्वामी गण यहाँ निबास करते हैं। वे सब माध्व गौड़ीय से सम्बन्ध रखते हैं तथा उन की दीक्षा, शिक्षा, भजन परिपाटी, तिलकादिकों का धारणादि-क्रिया माध्व-गौड़ीय रीति से होती है। अस्तु प्रस्तुत विषय में हम आलोचना करते हैं कि-इस संकलन में- बाललीला, जानरायलीला, जनमकरमलीला, रथलीला, ध्यानलीला, स्वयम्बरलीला, रघुनाथलीला, नारायनलीला, परतीतिपरीक्षा, ग्वालिनीझगरो, एवं कुछ फुटकर पद सन्निवेशित हैं।

बाललीला में ६६ दोहे, जानरायलीला में १३२ चौपाई, जनमकरमलीला में १०० दोहे, रथलीलामें १६० दोहे, ध्यानलीला में७६ दोहे, स्वयम्बर लीला में २३४ दोहे, रघुनाथलीला में २७६ दोहे, नारायन लीला में २६३ दोहे मौजूद हैं। बाललीला में ब्रजगोपियाँ जसोदा माता के निकट एकत्र होकर श्रीकृष्ण के दधिचौर्य्यादि चंचलता की प्रशंसा गर्भ निन्दा के द्वारा वर्णन करती हुई अन्तरमें प्रसन्नता लाभ करती हैं। इसमें इसका सरस वर्णन है। जानरायलीला में भागवत स्थित कुछ लीलाओं का निर्देश किया गया है। जनमकरमलीला में- श्रीकृष्ण के ब्रजसम्बन्धितलीला रस का बर्णन है। रथलीला में रथयात्रा का सरस बर्णन है। ध्यानलीला में श्री कृष्ण का ध्यान, स्वयम्बरलीला में रुक्मिणी स्वयम्बर का बर्णन, रघुनाथलीला में संक्षेप से रामलीला का बर्णन, नारायणलीला में समस्त भागबत का संक्षेप से बर्णन है। प्रीतिपरीक्षा में श्री-कृष्ण प्रेम-परीक्षा के लिये गोपी वेष बनकर श्री राधिका के निकट

जाते हैं एवं राधिका की सखी बन जाते हैं। दोनोंमें प्रेम का विवेचन, तर्क, वितर्क, समाधान किया जाता है॥ ग्वालिनीझगरो में जब कि ब्रजगोपियाँ दूध दही लेकर वेचने को जाती हैं तब मार्ग में श्रीहरि से भेट होता है। श्रीकृष्ण दानी बनकर दान माँगते हैं दोनों पक्ष में प्रीति कलह होता है।

काशी नागरीप्रचारिणीसभा की लाईब्रेरी में-
६६४। ५०३, ग्वालिनीझगरो, १७०५। ६६६, जगन्नाथ महात्म्य ८०६।५६८, जनमकरमलीला, ये तीनों मौजूद हैं। वृन्दावन सर्वेश्वरपुस्तकालय की एक हस्त लिखित कापी जोकि सं१७७६में लिपि बद्ध हुई है। इस कापी में बाललीला, जानरायलीला, जनमकरमलीला, ध्यानलीला, रथलीला, स्वयंवरलीला, नारायनलीला, रघुनाथलीला, मौजूद है। पाटना गुलजारबाग गोस्वामि कृष्णचैतन्यजी के पुस्तकालय में-" परतीतिपरीक्षा" मुझे देखने को मिली। हमारे संग्रह में-नारायणलीला का २ कापी, रघुनाथलीला का १ कापी है। इसके अतिरिक्त मदालसाआख्यान भी उन्हीं के नाम से ख्यात है। उन्होंने महाभारत और इतिहासकथासारसमुच्चय नामक जैसे बिशाल् संस्कृत ग्रन्थों का ब्रजभाषा में अनुबाद किया है। इन सब का खोज होनी चाहिये। अस्तु- इस माधबदास जी की बाणी के साथ एक ही जिल्द में बाबागौरगोविन्ददास जी का जीवन चरित्र उन्हीं बाबा के शिष्यों के उत्साह से प्रकाशित होकर संलग्न किया जाता है। जिसको राधाकुण्ड निवासी श्रद्धेय पञ्चानन शास्त्री ने बङ्गभाषा में प्रस्तुत कर हमें दिये हैं। प्रेमी भक्तसमाज दोनों का पठन पाठन कर सुखानुभब करेगा यह हर्दिक इच्छा है।

बैष्णव दासानुदास

कृष्णदास बाबा

❀ श्री ❀

श्री माधवदास जी की वाणी

❀ अथ श्री वाललीला लिख्यते ❀

जै जै श्री जगन्नाथ नीलगिरि पुर बासी ।
आदि अन्त जे सेवै प्राणी चरण कमल सुष रासी ॥१॥
गोपी गुपाल के गुन घना गावहिं दिन राती ।
गृह व्योहार रहित भई फिरै हरि रस माती ॥२॥
जहां तहां बैठि विचारहीं गोविंद गुन गाथा ।
कहत सुनत सुष पावहीं सुमिरै जदुनाथा ॥३॥
हरि गति हरि मति हरि सँग करहिं जु क्रीड़ा ।
हरि कृत प्रान बस वस है मन धरहिं नु ब्रीडा ॥४॥
प्रणय कलह करि हरि सना लोगनि बौराबहिं ।
उराहने के मिस जसुमति हरि चरित्र सुनावहिं ॥५॥
पुत्र तुम्हारौ जसुमति अति करै वुरिआई ।
वच्छ विमोच पिवाइ देइ धेनु दुहन न पाई ॥६॥
जतन जतन करि गोरसा राषैं जिहिं कोठी ।
घर भीतर वाहिर जितो सव उनकी मूठी ॥७॥
वै जानें सव की गती गति मति बुधि अधिकाई ।
गहत गहन नहिं पाइ ये देषतै लुकाई ॥८॥
करत उपद्रव नित नवनित में लोभ भारी ।
चोरी करतो देषिये वोलत दै गारी ॥९॥

सात साषि को नांव ले पुनि हमहिं षिजावहिं।
सोवत तनयहिं ऊगाय जाय जहां कछु न पावहिं ॥१०॥
पर घर पैठत ना डरै संग सखा सब लावै।
पटा अलूषल तर धरै ऊपर सषा चढ़ावै ॥११॥
ता ऊपर आपुन चढ़ै जब हाथ न पावै।
दुग्ध भंड भेदन करै पीवत माथ डुलावै ॥१२॥
ता औसर ग्रह देषन कों हम सब जब आई।
चल्यो पलाइ धरयो मही तव करसि उपाई ॥१३॥
सन्मुष मुष भरि षीर छींट मेरे नैननि मेली।
ठेलि गयौ गजराज ज्यों हूं रही ठगी सी अकेली ॥१४॥
करत कुलाहल घर बना बनबारि तुम्हारौ।
वनचर पास षवाबई नवनीत हमारौ ॥१५॥
बांटि बांटि लरकानि देइ दधि धृत माषन चोरी।
जब न लहै तब कोपित चलै भाजन फोरी ॥१६॥
पर घर घालन बालका तेरी भल मति नाहीं।
अपनों निज घर छांडिके पर घर कत जाहीं ॥१७॥
यौं हमें कह्यौ जबै तब बोले अटपटी बानी।
पर घर नाहीं ग्वालिनी मिथ्या अभिमानी ॥१८॥
मो महिं तेरौ घर वसै घर में हों आहीं।
घर धन जोबन पसु मानसा तुम्हारो कछु नाहीं ॥१९॥
में घर भीतर बाहिरा मेरौ सब कोई।
सात पुरुष लग दास मोर जाकी तुम जोई ॥२०॥
षावहु पीवहु लेहु देहु जहां जहां सब देषौ।
षोज न काहू को करौ सब अपनौ करि लेषौ ॥२१॥
मोहिं षिजै जैहौ कहां सब ठौर हमारी।
बाट घाट गिरि कंदरा (कंदरन) गोकुला मझारी ॥२२॥

इहि विधि बचन रुचै अती सुरसति ज्यों बोलै।
होठ कंठ लागै नहीं संसौ सब षोलै ॥२३॥
गोप कुमार सहस्र एक लीन्हें सँग डोलै।
ब्रज बन जमुना जल थला लीला बहु षेलै ॥२४॥
कबहुँक होय महा नट पट हस्त बजावै।
कबहुँक बैना सुर धरै संगीत सुनावै ॥२५॥
नागनि कुल मृग गो गना गति मति :विसरावै।
सपत राग मुरछन करै मुनि ध्यान भुलावै ॥२६॥
सीस सिषंड डुलावई कुंडल चमकावै।
नैन नचावै चातुरी भ्रूलता चलावै ॥२७॥
कबहूँकै निरति करै अति गति भेद दिषावै।
रूप अनूपम देषि देषि सुर गन सुष पावै ॥२८॥
अंग भृंग कुल भ्रम होय कटि पट भल दीसै।
श्रवन सु गुंजा वैजंती गैरुकसम मीसै ॥२९॥
स्वास चलै अलकावली स्वेद बूंद बिराजै।
कनक मेषला मनि सुढार पग नूपुर बाजै ॥३०॥
जहां जहां जाय तहां तहां होइ भूमि उजियारी।
और कहों कछु सुनहु देव दामोदर महितारी ॥३१॥
ए जित करै कहै तित तत कहन न जाई।
कबहुँक हठ करि वाट रोकि अति करै वरिआई ॥३२॥
गोरस केरौ दान मांगि गहने धरि हारा।
काहू केरौ काढ़ि करै नवनीत अहारा ॥३३॥
काहू त्रास दिषावई काहू फिरि मारै।
काहू को दधि दूध डारि देइ काहू को अचरा फारै ॥३४॥
कबहुँक जमुना पार होइ मांगै घाट उतराई।
जहां तहां हमहिं बिजावई यह तुम्हारौ कन्हाई ॥३५॥

ए गोपिन के वचन सुनि जसुमति मुसकानी।
आवत देषि गवालिनी जिय मांझ सकानी ॥३६॥
तिहि औसर नागर गुर आये सारंग पानी।
माता केरे पांय लागि बोले माधुरी सी बानी ॥३७॥
माता कौन काज ए ग्वालिनी द्वारे है ठांढ़ी।
सकल गोप की बृज वधू सलिता जू बाढ़ी ॥३८॥
सुनहु मेरे आनंद कंद तुम कुँवर कन्हाई।
गोप गोप की बृज वधू दैन उलाहनों आई ॥३६॥
सो उराहनौ कैसो मोसों कहौ समुझाई।
भले पुत्र को पोच जैसे तुम पाई ॥४०॥
इनके वचन रचन सुनि मात न करि प्रतीती।
संतत मिथ्या वादिनी इनकी यह रीती ॥४१॥
कलह कारिनी घर घरा बिधना अवतारी।
दोष निधान कपट में सिरजी ये नारी ॥४२॥
ए जित करहिं कहहिं सुनौ इनके ब्यौहारा।
जूथ जूथ मिलि आवहीं सिर दधि के पतारा ॥४३॥
एक और को हाथ धरै पुनि माथ डुलावहिं।
दधि पतार में षसि परै आनहि दोष लगावहिं ॥४४॥
कर तल ताल वजाबहिं गावहिं वहु गीती।
गोधन वृंद षिजावहीं धावहिं अभिनीती ॥४५॥
कंटक चीर उरझि रहै छूटत दुष पावै।
अपनों करम न देषही आनहि दोष लगावै ॥४६॥
कोऊ कहै कान्हर गाबहु कोउ कहै वैन बजावहु।
कोउ कहै नाव चढ़ावहु कोउ कहै पार लघावहु ॥४७॥
कोउ कहै उलटि फिरावहु कोउ कहै पलटावहु।
कोऊ कहै वेग न षेवहु कोउ कहै विरमावहु ॥४८॥

कोउ कहै कैसो नाचौ तुम हमरे आगै।
कोऊ कहै वाट दिषावहु दैहैं कछु मागै।४६॥
काहि काहि के वचन करौ में चल्यो पलाई।
वे बहुतै में अकेल छेकै मोहिं जाई॥५०॥
वेंनु विषान हरै सवै गेंदक हरि लेहीं।
गुञ्जावलि बनमाल हरै मांगैं नहिं देहीं॥५१॥
जवहूं छांड़ि चलों तौ तब मोहिं सपत दिबावहिं।
जहां जहां जाऊं तहां तहां मेरे संगहि आवहिं॥५२॥
तब हों मोंनि रहों तब मोहिं बुलावहिं।
जब हों थिर करि बैठि रहों तब मोहिं चलावहिं॥५३॥
दोष विकार बिगुन जिता तत ए सब करहीं।
प्रकृति सुभाव सहज ए पर के शिर धरहीं॥५४॥
विनय बिवेक विराग जोग बिज्ञान न मानहि।
चितवत चितहि डुलावहीं बूझहु सुबल सुदामहि॥५५॥
दोष लेश लागै नहीं में रहौं अकेला।
पर अदया अच्छया करौ कबहूँ कछु षेला॥५६॥
इहि विधि हरि के वचन सुनत सब गोपी।
हृदै अनंद दुरावहीं मुष अंचर रोपी॥५७॥
तुरत अपने कै नैन वैन चूंवत नँदरानी।
कंठ लगाइ सुनावई सु ललित मृदु बानी॥५८॥
तुमहौ मेरे प्राणनाथ ब्रजनाथ मुरारी।
मिथ्या तुमहिं षिजावही गोकुल की नारी॥५९॥
इनकें कौतूहल जीवनि मोर तुमहिं दोष न लागै।
जो तुमहि सुनै नरा तिनकै अघ भागै॥६०॥
तुम निरवरति निरंजना निरलेप नियारा।
निरूपम नित निराकुला निरदोष उदारा॥६१॥

निराकार निरभै जया नित्यानंद प्रकासा।
निरवंध सुष सुष बुध कहै सुत्र मुनि व्यासा ॥६२॥
बाल लीला अमृत गीत नाद पद रस्त विसाला।
प्रेम सूत्र ग्रंथित भई हरि गुन मनि माला ॥६३॥
कंठ अलंकृत जो करैं गावैं नर नारी।
सुष सुत गोधन धन धाम हृदै बसै मुरारी ॥६४॥
सुनहिं सुनावहिं गावहीं मन बुधि लगावहिं।
श्री कृष्ण भगति ते पावहिं सब के जीव भावहिं ॥६५॥
नील सिषर गिरि रुचिर रूप प्रगटत निबासा।
श्री जगन्नाथ को दासनि दास गावै माधव दासा ॥६६॥
॥ इति श्री बाललीला सम्पूर्णम् ॥

---

* अथ श्री जानरायलीला लिख्यते *

श्री जानराय हरि सम को नाहीं। सकल उपाय बसै ता माहीं॥
सनकादिक इक बूझी बाता। उतर न आवै कहै विधाता॥
हंस रूप करि प्रसन प्रमोधे। सुस्मृति नीर छीर करि सोधे॥
असुर बेद हरि बाज रूप धारी। हयग्रीवा तब भये मुरारी॥
असु असु मुष सम जम कारी। मारि असुर श्रुति आनि उधारी॥
महीमहार नव .मरदत जानी। रूप वराह कियो चक्रपानी॥
दंतारोपित वाहिर आनी। मारि असर राषी रजधानी॥
सिंध मथत सुर असुर जु हारा। मंद्रागिरि बूडत निरधारा॥
करि कच्छप बपु गिरिवरधारी। कंडू कृत निद्रा सुषकारी॥
अमृत कलस असुरन तब लीन्हों। तब हरि रूप मोहनी कीन्हों॥

करि परिहास असुर बौराये । सरनागत सुर अमृत पाये ॥
ग्राह ग्रसत संकट परे प्राना । तबहि उपाय रच्यो भगवाना ॥
चक्र नक्र कौ बदन विदारी । रछा करि गज सोक निवारी ॥
हरिनकसिप गयौ वैकुंठ धाई । ताके हिरदै पैठि लुकाई ॥
खोजि खोजि हरि को पार न पाई । असुर कुबुधी चल्यो षिसाई ॥
ब्रह्म सिष्टि में जो नहिं मरई । ता कारण नरसिंघ वपु धरई ॥

काल वजर जाहि जीत न पारै । ताकौ नरहरि नषां विदारै ॥
धरमांगद जब मस्तक नाया । रुक्मांगद जब षडग उठाया ॥
मस्तक पर जब षडग उपारी । प्रगट भये शंष चक्र गदाधारी ॥
वलि धरमिष्ट जब जीति न पारी । तब त्रिभुवन पति भये भिषारी ॥

सरग लोक इंद्र को हितकारी । वलि के द्वार रहै गदाधारी ॥
दुरवासा वलि पै हरि मागै । वलि हरि चरन कदै नहिं त्यागै ॥
रहे चरन इहां तज्यौ सरीरा । रहे द्वारिका गोमति तीरा ॥
न मरै कुसि कोई परवारा । ज्ञानराय तब कियो विचारा ॥

भूमि पारि ऊपरि स्यौ लिंग थापा । जाके दरस परस नहिं पापा ॥
अंध गोप स्यौ कह्यौ हरि जाई । तेरौ पुत्र बड़ौ अनियायी ॥
मेरे ऊपरि मेलि गयो धूरी । यह देषौ आंषि साचि वधौं बूरी ॥
देषि शरीर आनंद तब भयोऊ । धूरि भारि बोला महिं लयऊ ॥

पांइ लागि हरि स्यौं बूझी बाता । तुम मेरे प्राणनाथ चछू के दाता ॥
ग्रसे अघासुर सवल कुमारा । ज्ञानराय तब कियो बिचारा ॥
मरहि असंत संत जीवहि जैसे । सोइ अब करौ दोउ होहिं जैसे ॥
पैठि वदन रुधन कीयो द्वारा । मस्तक फोरि अघासुर मारा ॥

मारि असुर सुर विसमै कारी । बालक पलक भये मुरारी ॥
दावानल लाग्यौ जब धाई । सकल कुमार आये सरनाई ॥
मूंदौ आंषि श्रीकृष्ण यों भाषै । अगनि पान करि सबको राषै ॥
बरषत मेघ मूसल सम धारा । गोकुल गोपी गोप उबारा ॥

जग्य विरोध करी रखवारी। छत्राकार महा गिरधारी॥
जरासंध भै दुगम कराई। काल जमन भै चल्यौ पलाई॥
गह्वर वन गिर गुपत मुरारी। काल जमन मुचकुंद दिष्टि जारी॥
दुरबासा अंबरीष कौ वरत टारै। कृत्या सहित सुदरसन जारै॥
जाकौ चक्र फिरै आग्याकारी। ता श्री जानराय की हूँ बलिहारी॥
तिपुर असुर स्यौ मारि बिसावै। मैदानों तब बहुरि जिवावै॥
अमृत कूप रस सोंचै आनो। तब उठि धावै सहस्र पानी॥
विमन महादेव देषि मुरारी। हरि भये सहाइ गाइ रूप धारी॥
अमृत कूप रस पीयो पचारी। मारि असुर जै दई तिपुरारी॥
ता अवसर वृकासुर तप कीन्हीं। ताकौं वर महादेव दीन्हीं॥
जाके माथ हाथ हौं धरौं। सोइ जरि जाय इहै वर वरौं॥
होहु होहु बोले विस्वनाथा। हाथ धरयौ चाहै सिव के माथा॥
हर पलाय वह पेष्या जाई। हरयौ सकल बल बुधि नसाई॥
तिहि औसर श्रीकृष्ण भये ब्रह्मचारी। असुर विमोह ए वचन उचारी॥
वह जोगी वह नगन भिषारी। वाके कंठ बसै विष भारी॥
वाकौ कह्यौ सत्य नहिं होई। दक्ष श्राप तें सवै विगोई॥
भूत प्रेत पिसाच को नाथा। करि प्रतीति निज सिर धरि हाथा॥
इहि प्रकार वाकौ मति भरमाई। वचन उचारि माथे हाथ धराई॥
मारि असुर स्यौ संकट तें राषा। जै जै श्रीकृष्ण सकल सुर भाषा॥
द्रुपद सुता कुरु सभा मझारी। हरत चीर हरि नाम उचारी॥
श्री कृष्ण कृष्ण गोविंद मुरारी। राषि राषि प्रभु सरन तिहारी॥
तिहिं औसर उद्धार भये जदुराई। विविध भांति वस्तर पहुँचाई॥
बसन कौ अंत न आवै कबहीं। हारि परयौ दूसासन तबहीं॥
कछू कछू दिष्टांत दिषाये। तातें हरि जानराय कहाये॥
इहि प्रकार हरि है जानराया। अति दुस्तर है ताकी माया॥
मन वच क्रम हरि को अनुसरई। सकल आपदा दूतरि तरई॥

बहुरि सुनों जानराय है ऐसैं । सरनागत कों राषें जैसें ॥
जल नहिं बूडै अगनि न जरई । विष कृत्या सरप ससतर नहिं मरई
दिग्गज दैत ते सब विधि राषी । भगत प्रह्लाद जहां है साषी ॥
ऐसे हैं पांडव हितकारी । विपत समूह तें लिये उबारी ॥
विष ग्रह दहन सभावन माहीं । श्रीकृष्ण कृपा तें कहीं भै नाहीं ॥
वन की कथा सुनों चित लाई । पंडो मरन जुरजोधन रच्यौ उपाई
दुर्वासा को भोजन कराई । विधव्रत करि मन प्रीत बढ़ाई ॥
तब मुनि प्रसंन भये वरु दीन्हों । जुरजोधन मांगि इहै वर लीन्हों ॥
हमारे बड़े जुधिष्ठर राजा । ऐसें जाय करौ तुम उनके काजा ॥
सिष्य सहस्र दस लेहु गुसाईं । अतिथ होय जावहु उन ठांईं ॥
द्रुपद सुता जैसें भूंष न मरई । अरध राति कत भोजन करई ॥
मुनि जन सहित चले दुरवासा । जाइ ठांढ़े धरम तनै निवासा ॥
अरध राति ऊपरि चलि आवा । देषत पांडव विस्मै पावा ॥
आसन अरघादिक उपचारा । किये निरपति मुनि वचन उचारा ॥
हम आये राजा अतीथ तुम्हारा । सिष्य सहस्र दस देहु अहारा ॥
हिरदै कंपि मुष बोले बानी । धनि मेरौ भाग आज मैं जानी ॥
मुनि जन सहित करौ असनाना । जावत भोजन रचों विधाना ॥
सनान करन मुनि बृंद पठाये । पीछें राजा भीम बुलाये ॥
रचौ चिता नहिं आन उपाई । अगनि प्रवेश करों में जाई ॥
रिषि सराप पहिं सह्यौ न जाई । पहिलें मरिये भलौ उपाई ॥
सुनि नृप वचन रुदन करै भाई । द्रुपद सुता तब कहै समुझाई ॥
छिनएक विलंब करौ हो स्वामी । श्रीकृष्ण सुमरहु अंतरजामी ॥
नृपति कहै सुनि राजकुमारी । पुरी द्वारिका दूरि मुरारी ॥
सो हमरे सब विध हितकारी । सो समरथ सो पर उपगारी ।
संकट कोटि जो पार उतारै । श्रीकृष्ण बिना को बिपत निवारै ॥
इहि प्रकार सब चितवन करहीं । दुरवासा स्यौ अति भै डरहीं ॥
तब आये श्रीकृष्ण मुरारी । उदित भान मानों तिमिर बिदारी ॥

पाई । मानों अपुत्री के सुत उपजाई ॥
मानों आंधे दिवि दृष्टि पाई । मानों जोगी परमातमा पाई ॥
मानों निरधन के नों निध आई । चरन प्रछालि चरनामृत लीन्हों ॥
आसन आनि द्रौपदी दीन्हों । दुरवासा की कथा सुनाई ॥
भयो भरोसौ दरसन तब पाई । पहिलें मोहि जिवाइ सयानी ॥
समाचार सुनि बोले बानी । तब मुनि जन कौ करों विचारा ॥
कछुये लाबौ करों अहारा । कछु लजित कछु विसमै पावै ॥
द्रोपद सुता तब वदन दुरावै । सो हरि हम पै भोजन मागै ॥
जग्य कोटि जाके पग लागै । मेरे भोजन अन न षटाई ॥
द्रुपद सुता कहै सुनो जादव राई । एकै सीत न पाइये तबहीं ॥
सवै जिमाय जीमौ हौ जबहीं । पाक पात्र आनहु इहि ठांई ॥
श्रीकृष्ण कहें देषहु ग्रह जाई । कंठ लगन एक साक पत्र पावा ॥
पाक पात्र आनि श्रीकृष्ण को दिषावा । दियो द्रौपदा श्री हरि हाथा ॥
श्रीकृष्ण बोले देहु जल साथा । त्रिपत भये सकल ब्रह्मचारी ॥
आचमन करि जब रहे मुरारी । यह काँहू तें भयो विकारा ॥
कंठ लगन मुनि करहिं बिचारा । काहू को पेट फूल्यो अति भारी ॥
केउक मौंन देहिं कर तारी । काहू के कंठ धुंवाधी आवै ॥
काहू को अंन पान नहिं भावै । केऊ वाम दछिन है सोवै ॥
केऊ नाभि कमल टक टोवै । केउ हरडे को हाथ पसारै ॥
केउ अगसति कौ मंत्र उचारै । कोऊ एक पांच पेंड चलि जाहीं ॥
एक उवाहीं एक जँभाहीं । संध्या तरपन सब विसराहीं ॥
केऊ जल थल पैठि अगुराहीं । मुनि सबहू आनहु वेगि बुलाये ॥
तिहि अवसर श्रीकृष्ण भीम पठाये । वेगि चलहु कछु पाक सिराई ॥
भीम कह्यौ मुनि जन स्यौ जाई । भोजन पाय आसिका दीजे ॥
सीधै अंन बिलंव न कीजे । कहौ भीम को आये तिहारै ॥
दुर्वासा तब वचन उचारै । तुम तें कहा दुराऊं स्वामी ॥
हमारें आये अंतरजामी । संष चक्र गदा पदम सारंग धारी ॥
हमारे आये श्रीकृष्ण मुरारी ।

श्रीकृष्ण आगम सुन्यौ जब काना । तब दुरवासा के संकट परे प्राना ॥
अंबरीष की कथा सुध आई । चक्र परताप परा भै पाई ॥
श्रीकृष्ण के चक्र कौ पराक्रम जान्यौ । मिथ्या पाक अति भै मान्यौ ॥
चले पलाय सकल मुनि धावै । पीछे लागे भीम बुलावै ॥
भीम कहै मुनि कोप न कीजे । कछु एक वचन राजा कों दीजे ॥
दुरवासा तब बोले बानी । तुम्हारे सत्र जाहु छै मानी ॥
दै असीस चले दुरवासा । कछु एक उदर भयो सुष बासा ॥
मुनि गए दूर भीम फिर आये । समाचार श्रीकृष्ण कों सुनाये ॥
हँसे श्रीकृष्ण पांडव हितकारी । इहि विधि सकल आपदा टारी ॥
तातें जानराय जीव भावै । जाकौ जस ब्रह्मादिक गावै ॥
जानराय की हूं बलिहारी । सरनागत की करै रषवारी ॥
जानराय श्रीकृष्ण की लीला । इहि रस है ताको मन मीला ॥
सदा कल्यान विजै सुष पावै । लाभ होय हानि दूर गमावै ॥
जानराय श्री जगनाथ उदारा । नील सिषर गिरि करत विहारा ॥
भगति मुकति दायक पीतवासा । ताके चरन शरन माधव दासदासा ॥
॥ इति श्री जानराय लीला संपूर्णम् ॥

---

* अथ जनमकरमलीला लिख्यते *

जै जै श्री जगंनाथ व्रज नाथ मुरारी ।
दिवि दिवि करि करि करम कलिमल अवहारी ॥१॥
भूमि सहित ब्रह्मा इन्द्र की सुनी गुहारी ।
जब जदु कुल औतरे मधुपुरी मधु हारी ॥२॥
जगत निवास श्री वसुदेव देवकी गरभ निवासा ।
पूरव दिस मानों उदित भानु त्रिभुवन प्रकासा ॥३॥

भादों अष्टमी कृष्ण पछि रोहनी अरध राता।
जगत मंगल सुभ लगन जोग हरि जनम बिष्याता ॥४॥
अद्भुत बालक कमल नयन पीतांबर धारी।
संष चक्र गदा पद्म मुकट कुंडल भुज चारी ॥५॥
देषि देषि वसुदेव देवकी कौ संसौ गयऊ।
तात जननी को वचन सुनाय मान ससि भयऊ ॥६॥

स्नेह स्रवत स्तन पिवाय देवकी सुष भयउ।
तब वसुदेव उठाय गोद लै गोकुल गयउ ॥७॥
तनय जसोदा सेज स्वाय कन्या लै आयौ।
देवकी अंक बैठाय कें सब लोग जगायौ ॥८॥

कंस हाथ तें गगन गई दुरगा है माया।
बंधन छुड़ाय वसुदेव देवकी के कंस बुझाया ॥९॥
इहि प्रकार हरि मधुपुरी तजि गोकुल जाई।
नंद महोछौ गोप गोपीन सों अति प्रीत कराई ॥१०॥

गोकुल बसता वाल कृष्ण वहु करम जो कीन्हा।
कहत सुनत सुमरत हरी सब को सुष दीन्हा ॥११॥
प्रथम पूतना प्रान सोषि प्रानाहत कीनी।
स बिष पयोधर अधर लाय जननी गति दीनी ॥१२॥

मास द्यौस के सिसु उतान सोवत पग फटकारा।
कपट विकट सकटा सुरा सत षंड करि डारा ॥१३॥
वरषि द्यौस के तब भये त्रिणावरत आया।
लै गयो गगन उचाय कंठ गहि मारि षिसाया ॥१४॥

एक द्यौस स्तन पान करत आई जु जंभाई।
मुष महि जगत निरषि सबै जसुधा विसमै पाई ॥१५॥
बाल चरित कीये जिते तिते कहन न जाई।
निज जन बृज आनंद देय सिसु संग लगाई ॥१६॥

कबहूँ कै माटी षात सुनत जसुमति उठि धाई।
तब डर डरात मुष पसारि दिय विस्वरूप दिषाई ॥१७॥
जननी जसोधा बांधि यौं कटि ऊषल दामा।
जगत प्रसिद्ध भये हरी दामोदर नामा ॥१८॥
जानि पानि मैं मगन कियो पिछली सुधि आई।
भंजि जमला अरजुन तर तारे दोउ भाई ॥१९॥
बछ चरावनि लागि यौं सिसु संग बिहारा।
फल कपिथ सो फारि यौं बछासुर मारा ॥२०॥
ग्रसे वकासुर जलत ताल गहि उगिल जो डारा।
देषत सकल सषा संग धरि चिंच विदारा ॥२२॥
ग्रसे अघासुर सकल कुमार संग पैठे धाई।
मसतक फारि बाहिर भये पसु पाल जिवाई ॥२२॥
भोजन करत बाल बछ ब्रह्मा हरि लीन्हा।
औरै सृष्टि करी हरी सब को सुष दीन्हा ॥२३॥
धेनुक मारि ताल फल सब सषान षवाये।
विष जल पीवत मृतक भये हरि बहुरि जिवाये ॥२४॥
काली दवन कियो हरी दावानल हारी।
मारि प्रलंब षिसाई यों भंडीर बिहारी ॥२५॥
मुंजारनि दावानला पान कियो मुरारी।
ब्रज कुमार सब राषि यौं वरिषा रितु कारी ॥२६॥
सरद बिसद वेनु वाय बरनत ब्रज नारी।
हेमंत बरत सफल करन कों बसतर हरे कुमारी ॥२७॥
जग्य बधू के भोजन करि नंद प्रमोधा।
नगर बा रूढ़ प्रबरत ते इंद्र कौ जग्य विरोधा ॥२८॥
कोप करत सुर पति अति बनषत जल धारा।
कर गिरि छत्र धरयौ हरी भयौ ब्रज रषवारा ॥२९॥

सात वरष के श्री बाल कृष्ण करम किये अधिकाई ।
नंद प्रवोधत गोप चक्रत गर्ग वचन सुनाई ॥३०॥
सुरभी सक्र अभिषेक करत देव दुंदजु बाजा ।
गो रच्छा तें नाम भयौ गोबिंद सु राजा ॥३१॥
नंद बरुन तें आनि यौं वैकुंठ दिषावा ।
रास बिलास किये हरी मनमथ जु नचावा ॥३२॥
सरद पूरन ससि मंडला निसि वेनु बजाई ।
सुनि सुत पति निज ग्रह धन तजि गोपी आई ॥३३॥
निठुर बचन बोले हरी बहु धरम सुनाई ।
हरि चरनारबिंद बिना उनहिं कछु न सुहाई ॥३४॥
सु दृढ़ प्रीत परपक्क जानि गोपी रमत श्री हरी ।
अतिसौ भागवत जानि तजि विमन करी ॥३५॥
बहुरि विकल संताप विरह बूझत वन हारी ।
गोपी संगीत प्रीत प्रगट पीतांबर धारी ॥३६॥
प्रसन प्रवोधत गोप वधू रास रसिक मुरारी ।
कीये रूप तिते हरी जावत ब्रज गोप नारी ॥३७॥
थकित चंद व्यौमानिका सुर विसमै कारी ।
काम जीति श्री जगन्नाथ सेवग सुषकारी ॥३८॥
सरप सुदरसन ग्रसे नंद हरि लिये उवारी ।
संष चूड सिर षंड कियो राषी बृज नारी ॥३९॥
अहते अरिष्ट पापिष्ट केसी तन फारी ।
बृज कुमार सब राषिया व्यौमासुर मारी ॥४०॥
वरिष एकादस ब्रज बिहार करि हरि मधुपुरी आये ।
जमना जल अकरूर को विश्व रूप दिषाये ॥४१॥
रजक मारि वाइक्क कौ वर दियो दयाला ।
भगति सुदामा प्रीत पाइ पहरी वन माला ॥४२॥

लै कुविजा चंदन सरीर सुंदर वर कारी।
धनुष भंजि द्वै षंड कियो रषिक सब मारी ॥४३॥
मारि कुवलया पीड महा गज दंत उपारे।
मुष्टिक मल चान्यौर से लीला धरि पारे ॥४४॥
मारि कंस भै पार केस गहि धरनि षिसाया।
उग्रसेन को राज देय यदु वंस बढ़ाया ॥४५॥
वसुदेव देवकी के पांइ लागि बंधन छुटकाई।
दीन बचन कर जोरि बोले जदुराई ॥४६॥
वरषि द्वादश उपनैत पाइ वेदागम जानी।
गुर दछिना को कारनै संषासुर हानी ॥४७॥
संजमनी पुर हरि गये ल्याये जम जीती।
गुर दछिना गुर पाय कें भई परम प्रतीती ॥४८॥
विद्या पढि हरि मधुपुरी आये जादव राई।
उद्धव बुद्धि विसुद्ध जानि गोकल दियो पठाई ॥४९॥
नंद जसोधा प्रमोधि कें कथा सुनाई।
गोपिन आनंद दियो निज तंत बुझाई ॥५०॥
कृष्ण निष्ठ गोपी भईं ऊधौ बंदन कीन्हा।
प्रीत दया लै आयकें हरि कौ सुष दीन्हा ॥५१॥
ब्रज कुविजा अक्रूर तोषि पांडौ हित कारी।
सतरह वार जीतिये हरी जरासिंध गयो हारी ॥५२॥
काल जमन मुच कुंद दृष्टि जारयौ यादव राई।
द्वादश जोजन सिंध मधि द्वारिका बसाई ॥५३॥
प्रथम रुकमनी रानी पुत्र प्रद्युम्न उदारा।
श्री कृष्ण सम सुंदर सरूप सील संब जिन मारा ॥५४॥
पुत्र हानि लाभ जानि दुष सुष ग्रह संगा।
अरथ अनरथ कहे हरी मन हरन प्रसंगा ॥५५॥

जीति जामवंत स्यमंतक मनि जामवंती आनी।
सात वृषभ एक वार द्वन करि सत्या रति मानी ॥५६॥
लछि वेधि लछमना आनी नृप जीती।
अष्ट महा सिद्ध पटरानी भई परम प्रीती ॥५७॥
मुर नरकासुर मारि विविध आनी सब कन्या।
सोलह सहस्र एक सत हरि वरी सब धन्या ॥५८॥
एक लगन नाना ग्रह वर नारि विवाही।
किये रूप तिते हरी विहरत तिन माहीं ॥५९॥
सुरग सची वर जीति पारिजातक आनी।
करि परिहास प्रमोध दै रुकमिनि निज बानी ॥६०॥
बानासुर भुज भंजि स्यौ सगन विमोही।
करि अनिरुद्ध विवाह रुकम मार्यौ निज द्रोही ॥६१॥
पतति कूप नृप नृग उधारि जादव समझाई।
गोकल नंदा नंद हेत बल दियौ पठाई ॥६२॥
नंद जसोदा गोप गोपीन को आनँद दीन्हा।
करि विहार कालिंदी नदी कौ आकरषन कीन्हा ॥६३॥
पुंडरीक काशीराज दोऊ मारे मधु हारी।
कृत्या सहित सुदरसना कासी सब जारी ॥६४॥
द्रुविद द्वन करि गज पुरी राषी जादौं राई।
नारद मुनि उपदेस देइ ग्रह धरमु दिषाई ॥६५॥
सभा सुधरमा बैठि सुनी नृप दूत गुहारी।
ता पीछें पांडव संदेस सुनि चले मुरारी ॥६६॥
जगि आदि जरासिंधु मारि नृप को कियौ उधारा।
जगि जीति जगि सभा माहिं सिसुपाल संघारा ॥६७॥
जगि अंति जरजोधन कौ भरम विसतारा।
भारत निमित कलह जुध कौ बीज संचारा ॥६८॥

सौभ सालु मारि दंत वक्त्र संघारी ।
अंत विदूरथ मथन कियौ ससत्र तजे मुरारी ।।६९।।
राम सूत बल बलहिं मारि तीरथ कियौ असनाना ।
नैमिसारन मुनिन कौ ग्यान दियौ भगवाना ।।७०।।

इहि प्रकार हरि असुर मारि साधुन सुष दीन्हों ।
अब बिनु जुध दया निधि निज उपगार जु कीन्हों ।।७१।।
प्रथम सुदामा के तंदुल कियो अहारा ।
इंद्र समान विभै दियौ मित्र को कियो उधारा ।।७२।।

सूरज ग्रहन सुनि श्रींपति कुरषेत सिधाये ।
जादौ सकल समृध देषि सवहिन गुन गाये ।।७३।।
नंद जसोधा राम कृष्ण भेंटे दोउ भाई ।
अंक वैठारि सुष भयौ रहे कंठ लगाई ।।७४।।

गोपिन को आनंद दियो निज वदन दिषाई ।
अमृत वचन सुनाय के ज्ञान निज भगति दिढाई ।।७५।।
ता पीछे सकल नृप की कुसल बूझो जादों राई ।
कुर कुल कुंती पंडवनि सों प्रीति कराई ।।७६।।

जादव कुल कुरु नारि सवै मिली एक साथा ।
श्री गोविंद विवाह वधू गाई निज गाथा ।।७७।।
ता पीछें सकल मुनि जन आइ हरि संग अलापा ।
अमृत वचन सुनाइ सबनि के हरे संतापा ।।७८।।

ता पीछें वसुदेव जग्य विधि कराई ।
तब सबनि की पूजा करी निज भवन पठाई ।।७९।।
आज कल्हि काहि कहि तीन मास बिताई ।
नंद आनंद कराइकें गोकुल दियौ पठाई ।।८०।।
ता पीछें द्वारिका पुरी आये जादव नाथा ।
राम कृष्ण वसुदेव देवकी सों कही निज तत की गाथा।।८१।।

ता पीछे मृतक पुत्र आनि माता को दीन्हा।
सुभग सहोद्रा हरन धनञ्जै जती जु कीन्हा ॥८२॥
ता पीछें श्रुतिदेव जनक स्यौ प्रीत कराई।
घर दोऊ के प्रवेश कीन्हों वेदारथ दिढाई ॥८३॥
ता पीछे स्यौ संकट तें फेरि राख्यौ जादौ राई।
मोह वचन सुनाय कें बृकासुर मारयौ अन्याई ॥८४॥
ता पीछें द्विज के मृतक पुत्र वैकुंठ ते आना।
हरि पुरुषारथ देषि बिजै तज्यौ अभिमाना ॥८५॥
ता पीछे लछमी के पति की भृगु करी परीछ्या।
स्यौ विरंचि पर हरि करी हरि भजन की इछ्या ॥८६॥
ता पीछे जल विहार द्वारिका विजै मुरारी।
नृत्य गीत वादित्र सहित सु मिलित वर नारी ॥८७॥
सोलह सहस्र अठोत्तरा सत रानि विवाही।
एक एक के दस दस पुत्र उपजायउ ताही ॥८८॥
अनु दिन हिरदै विचारहीं श्रुति पार न पावहिं।
निज जन सदा लड़ावहीं निर्मल जस गावहिं ॥८९॥
परम धरम कौ स्थापक महाभारथ कीन्हा।
सकल लोक निसतार हेत गीता अमृत दीन्हा ॥९०॥
वहु विध विपति समूह तें पांडौ निसतारे।
अंत परीछत राषियौ ब्रह्म ससत्र न जारे ॥९१॥
धरम तनै को राज दियो कुरु वंस संघारा।
होय अर्जुन निमित्त स्वारथी भू भार उतारा ॥९२॥
पुनि करम करि करि हरि सब लोक सिषावहिं।
श्री कृष्ण द्वारिका राज करिहिं मुनिगन गुन गावहिं ॥९३॥
करम अनंत प्राकरम अनंत को करिहै व सेषा।
भूमि रेंनु कोई गनें नहिं हरि करम को लेषा ॥९४॥

जो कछु कहै करै तितौ अपनों उपगारा ।
हरि की रतन बिना भव समुद्र को नाहीं निसतारा ॥६५॥
जिह्वा पाइ नर सरीर जे हरि कीरतन न करहीं ।
श्री वैकुंठ नसेंनि पाइ मूरष षिसि परहीं ॥६६॥
हरि लीला हरि जनम करम सुजस जस जे गावहिं ।
ज्ञान भक्ति वैराग जोग वंछित फल पावहिं ॥६७॥
सतयुग ध्यान त्रेता मषा द्वापर हरि पूजा ।
कलि कीरतन समान और नाहीं कछू दूजा ॥६८॥
कीरतन प्रिये महाप्रभु लीला चल करै भोग विलासा ।
श्री जगंनाथ जगत गुरु श्री कृष्ण कौ उपदेशा ॥६९॥
वृथा कथा परहरि करि कीरतन अभ्यासा ।
हरि लीला हरि जनम करम कहि माधव दासा ॥१००॥

॥ इति श्री जनम करम लीला सम्पूर्णम् ॥

---

* अथ श्री रथलीला लिख्यते *

जै जै जै श्री जगन्नाथ बिजै मुरारी ।
बुधि प्रकासक सदा श्री कृष्ण सेवग सुषकारी ॥१॥
नील गिरिवर सुंदर श्री कृष्ण वृछि विराजै ।
सप्त दीप नव षंड मधि सब ऊपरि भ्राजै ॥२॥
श्री कृष्ण वृछि आनंद मूल गुन पल्लव साषा ।
वेद पुरान पत्र चारि ग्यान पुहप सुवासा ॥३॥
अरथ धरम काम मुकति भगति सुपक फल फलई ।
श्री कृष्ण वृछि छाया करै ताप त्रय हरई ॥४॥

अद्भुत बृछि प्रकास मान सीतल सुषदाई।
चितवत चिंता सब हरै बृछ की अधिकाई ॥५॥
सुर नर मुनि जन सिध साधक पंछी वहु प्रकारा।
उडै क्रीडै निड विड करै कृष्ण बृछि अधारा ॥६॥
श्री कृष्ण वृछि महिमा अपार गुन कहै न जाई।
अरध उरध मधि व्यापि रह्यौ वृछि की बड़ाई ॥७॥
लोक अनुग्रह कारनै श्री धरि हरि वैसे।
सुनो कछु इक श्री जगंनाथ सोभत है जैसे ॥८॥
मेघ स्याम अभिराम सदा सुंदर सुकुमारा।
चंदन लेपन सकल गात लावंनि सुढारा ॥९॥
बदन सुष गुन सदन मदन मान गंजन जन करई।
भ्रू पल्लव अति ललित धनुष आकार कौ हरई ॥१०॥
लोचन चारू विसाल विचित्र कमल दल राता।
कुंडल मंडित गंड जुगल भाल तिलक विख्याता ॥११॥
अधर सुरंग सुढार सुधर सुघटित सुभ नासा।
कंवु कंठ मनि भ्राजमान सोभित पीत वासा ॥१२॥
सुवलित वाहु विशाल कंवु कर चक्र विराजै।
उर वर हृदै विसाल विसुध बनमाला छाजै ॥१३॥
उदित उदर उदारन वंधु कर कंकन मीसै।
कटि तट घटित दुकूल दिव्य दामिनि मानों दीसै ॥१४॥
जंघा अघहर उदै तेज आवभ निधाना।
चरन कमल कल्यान रासि श्रुति स्मृति बषाना ॥१५॥
श्री कृष्ण कल्प तरु काम धेनु चिंतामनि होई।
बंछत फल प्रापति करै क्रीडत है सोई ॥१६॥
डंड सिंघासन छत्र चँवर है गै सँग धावै।
उतकल देस श्री जगंनाथ गज पती कहावै ॥१७॥

देव देव देवाधिदेव राज राजित उपचारा।
श्री परषोतम क्षेत्र सिंध तट विहारा ॥१८॥
कवहुँकै चढ़ि विमान स्नान सागर करै जाई।
कबहूँकै दुगधै पान करै ग्वालनि गृह जाई ॥१६॥
कबहुँकै रिषि तरपन करै मार कुंड व जाई।
कबहूँ कै दानवा दान करै जागरन कराई ॥२०॥
कबहूँ कै जल विहार करै नाना वेष धराई।
कबहूँ सुषासन चतुर दोल बाज गज चराई ॥२१॥
कबहूँ कै दोला दोल करै आपुदा सब हरई।
कबहूँ कै करै महा असनान निज मंदिर जाई ॥२२॥
श्री परसोतम पच्छ एक निद्रा जु कराई।
जोगमाया आश्रय कर महाप्रेम भराई ॥२३॥
पुनि जागे श्री जगंनाथ लोचन रतनारा।
बहुरि विहार करै हरी रथ के उपगारा ॥२४॥
श्री वृंदाबन तर श्रीकृष्ण विरह व्याकुल भए भारी।
उतकल देस आय औतरे बहुरि मिलन मुरारी ॥२५॥
तिहि तर वर वर रचित महारथ राज सुढारा।
षंभ रंभ विराजमान वहु विधि प्रकारा ॥२६॥
नाना रतन जडित महा सोभा सागर लीन्हा।
षोडस चक्र अष्ट अछि पाट मंडप कीन्हा ॥२७॥
तऊ परि हरि मंदिरा द्वार विंदु विराजै।
धुजा धुर डंड कूवरा रथ नीरौं छाजै ॥२७॥
रतन मंडित वहु भांति विचित्र धुज विजै पताका।
मानौं उठै राभेंटि सागर तें परवत मैनाका ॥२८॥
कवहूँ कै सेत पीत पट घटना वनि आई।
कवहूं कै नील आरकत चरन नाना भेष धराई ॥२६॥

लंबित भल दीसै।
विविध कुसुम वनमाल विमल रथ चहुँ दिस मीसै ॥३०॥
चवर छत्र विराजमान चंदरातप ताही।
दरपन पांति सुभांति सो सबद कराही ॥३१॥
छुद्र घंटिका घटित निकट सो सबद कराही ॥३१॥
नाना वरन अलंकृता रथ वर की सोभा।
कहि न जाय देषत वनै सब कौ मन लोभा ॥३२॥
कहुँक व्याघ वराह विचित्र लिषित रथ माहीं।
कहूँक मृग सारदूल उतंग वहु रंग कराहीं ॥३३॥
कहूँ एक देवासुर विहार कहूँ धू पहलादा।
कहूंक पारिजात को हरन कहूं इंद्र श्रीकृष्ण विवादा ॥३४॥
हरि चरित्र विचित्र समग्र लिषत रथ माहीं।
जा देषें आनंद होय दुष दूर पलाहीं ॥३५॥
तोरन बंदर वारि हार हारावलि राजै।
कनक कलस रथ ऊपरै चक्र सुदरसन भ्राजै ॥३६॥
गरुड ध्वज जै जुगति नांउ नंदी घोष उदारा।
अति विचित्र रथ कथा अपार को करै विसतारा ॥३७॥
बहु बिधि बहु प्रकार विचित्रता वरनी न जाई।
मानों सुमेर को शृंग सुरग तें इहां चलि आई ॥३८॥
इहि प्रकार बलभद्र सहोदरा कौ रथ साजा।
विजै समें तब जानि प्रानि संष तब बाजा ॥३९॥
आइ मिले सेवग समूह प्रभु भेंट कराहीं।
जो जाकौ अधिकार होय सेवा ग्रहन किये जाहीं ॥४०॥
प्रथम विजै बलभद्र धौल मुष की अति सोभा।
धुर मित अरुन उदार नैन देषत मन लोभा ॥४१॥
पदवि डगमग चल माथ माथा डुलावै।
संसै सूल को दूर करै सब लोग झुकावै ॥४२॥

रै रै नरौ डरहु जिनि भै नाहीं रे नाहीं।
आनंदित हरि नाम लेहु विचरहु महि माहीं ॥४३॥
एक एक श्री वासुदेव दूसरौ नहिं आना।
ए देषौ मेरे श्रवन माहिं एक कुंडल प्रवाना ॥४४॥

यह कहि बोलत डोलत श्रीराम नील निचोला।
रथ आरूढ भये हरी वाजै दुंदभि ढोला ॥४५॥
इहि प्रकार भगनी सहोदरा रथ आइ वैसी।
रूप अनूपम कही न जाय जैसी है तैसी ॥४६॥

ता पीछे श्री जगंनाथ की विजै विराजै।
संष महूवरी भेरि नाद कंसा हल बाजै ॥४७॥
धौल छत्र वीर छत्र पट छत्र धराहीं।
पहुप वृष्टि अष्ट वान वनक दीवट जु वराहीं ॥४८॥

पांति पांति वहु भांति चंवर ढारैं नर नारी।
नैन हरत सिंदूर पानि गज गति चलहि मुरारी ॥४९॥
दछिन वाम सौं दिसा अवलोकहिं स्वामी।
चलत चलित गति रथ समीप सो अंतरजामी ॥५०॥

आरूढ भयेउ ऊरध वदन देषि सुर करहिं विचारा।
आवत हैं हरिपुर हमारा आज भाग हमारा ॥५१॥
कंपित रथ की पताष तबै मानों हस्त डुलाई।
नहिं आवैं हरिपुर तुम्हार महि ऊपर जाहीं ॥५२॥

इहि प्रकार श्री जगंनाथ रथ जात्रा जाहीं।
जै जै सवद उचारहीं हरि दरसन पाहीं ॥५३॥
ता पाछैं परिवार सहित सामग्री आई।
वावन कोड भंडार सहित लै रथ बैठाई ॥५४॥
निज मंदिर गोविंद रमापति भामा लै राषी।
श्रीपुरुषोतम छेत्र षंड छांड्यौ नहीं उन हौं इह भाषी ॥५५॥

सुर किन्नर मुनि सिध साध्यक देषै देव राजा।
वेद पुरान को अरथ प्रगट रथ ऊपर भ्राजा ॥५६॥
सुरंग महोछौ गनहिं नहीं इह जात्रा देषै।
श्री परसोतम वास वंछैरु वसेषै ॥५७॥

तार तरल हीरावली हरि हृदै विराजै।
महा मुकट सिर सोभिता श्रवन कुंडल भ्राजै ॥५८॥
कर कंकन वर संष चक्र धरै वाहु विसाला।
मनिमै तिलक ललाट घटित कंठ कदंब की माला ॥५९॥

पदिक फटक कटि सुत्र टाड दोडर धरै भारा।
सहकत सुंदरता सार पिय को कवल लंकारा ॥६०॥
आगे होइ गरुडध्वज भगत हरि सनमुष रहई।
कर जोरें स्वामी सों कछू वारता करई ॥६१॥

जहां जहां करहु पयान तहां में वाहक तिहारा।
नव विष्णु रथ सोभा प्रसिद्ध पुरान पुकारा ॥६२॥
होइह रथ सौभाग पियार पिय पायौ परस तिहारा।
इहि चढि करहु विहार मोर फेरहु अधिकारा ॥६३॥

सुध धौल तन चारि वेद जूती तन आनी।
सेव सुग्रीव मेव पुहपक वलाहक असु बषानी ॥६४॥
तदनंतर सारथी समरथ अरजुन जन आये।
पदनि पानि पादोद पाइ वीनती कराये ॥६५॥

में अपराधी सुनहु स्वामी मेरो ग्यान हरि लीन्हा।
तुम परमेस्वर परम गुरु को में सारथी कीन्हा ॥६६॥
एक पराध हरौ हरी में रथ बाहुक है हों।
तब सेवग तब दास सदा तुम्हरे संग रैहौं ॥६७॥
इह कहि कर धरि रजु महा रथ बैठे जाई।
तदनंतर उत्कल नृप सवद सुठि सु कराई ॥६८॥

भेंट देइ पूजा कराहिं आरती उतारैं।
लै सिंदनी हाथ श्री जगंनाथ जी द्वार बुहारैं ॥६९॥
करि सर मारजन आस पास चंदन छींट जु देहीं।
करि परनाम पर दछिना दै परसाद जु लैहीं ॥७०॥
पिछै जाय श्री जगन्नाथ को रथ माथे ठेलै।
धनि उडीसा देस लोग कैसौ संग षेलै ॥७१॥
चलत चारु रथ चक्र महा धुनि सुनि आनंदे।
केउ गावें कैउ निर्त करें केउ अस्तुति कर वंदे ॥७२॥
वाजनि विविध प्रकार महा धुनि धुजा फहराहीं।
नाना देस भाषा उचारि कुलाहल कराहीं ॥७३॥
अग्र धूप धूम लहरी सम गगन उडाहीं।
चलत चलित गति रथ समीप पुनि पाप पलाहीं ॥७४॥
दूरि दरस जे पांचहीं आन नहिं जानै।
यह सरूप यह कमल नयन मन माहिं जु आनै ॥७५॥
चलत महारथ उडत धूलि धौरति आकासा।
षीर समुद्र मधि जानां मंदर गिरि प्रकासा ॥७६॥
कलप वृछित तल मानों पाइनि चलि आई।
वंछित फल प्रापति करै वंदन जु कराई ॥७७॥
कबहुँक सुठि अति मंद मंद गति रथ चलई।
दूर देस आगौन दिसा आसा सब फलई ॥७८॥
कबहुँक होय अचल रथा सब वेग जु हरई।
कमलाकांत संग वियोग की वांछा करई ॥७९॥
कबहूंके धावै रथ अति गति कही न जाई।
वेगि जाइ फिरि आइ रमा मिलि है जनु आई ॥८०॥
बहुरि अचल पुनि सचल होइ कबहूं पुनि धावै।
पनरपि मंद गवन करै आनंद बढावै ॥८१॥

इहि प्रकार रथ जात गुंडीचा वीच विसरामा।
वाल केलि गुंडीचा असथल कौ नाम सुंदर अभिरामा ॥८२॥
जहां सीतल रसोई स्वाद विविध बहु भोग कराहीं।
बहुरि वालुका की किरन देषि रथ तीन चलाहीं ॥८३॥
तुम आगे रथ एक हम आगे रथ तीन्यौ धावहिं।
श्री वृंदाबन की बाल केलि अद्यापि दिषावहिं ॥८४॥
परम गुंडीचा मंडपा रथ लागौ जाई।
जहां तहां वेद तहां रहै आनंद विधि पाई ॥८५॥
रथ तें उतरि श्री जगंनाथ पांयन चलि जाई।
दीपावलि दंपति कानन पहुप बृष्टि कराई ॥८६॥
चौंर ढारैं जै जै सवद करें नृत्य गीत समै से।
श्रीजगंनाथ मंडप गुंडीचा मधि श्रीकृष्ण सुषासन बैसे॥८७॥
मंडप गुंडीचा मध्य श्री कृष्ण दरसन जो करहीं।
सुकुल कोटि उधार करै अंत हरि पुर रहहीं ॥८८॥
इंद्र दवन सरोवरा सुर नर करै सनाना।
श्री जगंनाथ कौ दरसन करै पावै पद निर्वाना ॥८६॥
इहि प्रकार हरि उदार निसतारक स्वामी।
लोक अनुग्रह कारनै रहै षगपति गामी ॥६०॥
जा दिनतें हरि रथ चढ़े जात्रा कौ गयऊ।
ता दिन तें श्री रमा सतिभामा को विरह जु भयऊ ॥६१॥
किशलय शयन विमूरछिता अंग चेष्टा नाहीं।
हरि हरि नांव उचारहीं कंठ स्वास चलाहीं ॥६२॥
गंड मंडल पांडुर वरन कर तलु जल गाहीं।
मरन विथा तन ताप कथा कछु कही न जाहीं ॥६३॥
असु गलित कर कंपिता हरि लेषन करहीं।
आलिंगन बिनु पाय कें विमूरछित है परहीं ॥६४॥

मंद । पवन चंद चंदना सब विष सम देषै ।
भरमित विकल भई तवै दस दिस हरि मै देषै ॥६५॥
मेघ स्याम वरषा रती मोहिं ताप चढावै ।
जात्रा कों गये कंत मोर अजहूँ नहिं आवै ॥६६॥
बहुरि आवै कि न आवई कछु जानि न पारी ।
तिन समै त्याग कियो मोर जिमि सीता नारी ॥६७॥
इहि प्रकार करि बहु विचार कमला प्रेम पात्रा ।
तिहि औसर संभ्रम भई ही राना जात्रा ॥६८॥
बाजै मृदंग निशान ढोल दुंदभि धुनि बंदी ।
श्री परषोतम नारि सकल आई आनंदी ॥६९॥
जैसे वृंदावन वेंन नाद सुनत धाई सब गोपी ।
ऐसें धाई सब नगर नारि गुर आदर लोपी ॥१००॥
चढि विवान धरि संष चक्र धुज विजै पताका ।
नृत्य गीत वादित्र सहित चली त्रिभुवन माता ॥१०१॥
कोप रहित आवेस सहित धाई ठकुराइनि जाई ।
देषि गुंडीचा मंडपा ठाट भुलाई ॥१०२॥
कंत मनावन जब करै माननी पठाई ।
यह न होय देषी सुनो बिन बोलै जाई ॥१०३॥
बिन बोले जो जाय नारि बहु लघु व्यौहारा ।
गमन बिना मन स्वस्त नहीं यहु करहु विचारा ॥१०४॥
यह जड़ता मेरी उचित होऊं में पानि की जाई ।
हो सरस्वती मोरी जाडि हरौ तुम काहे भुलाई ॥१०५॥
सरसुती कहै कमला सुनों मोर उपाई ।
जो गौर तन चहही तौ दूत पठाई ॥१०६॥
तुम मिथुला रघुनाथ तवै बिजोग विधि कीन्हा ।
पवन पुत्र हनुमान तवै सायर लंघन कीन्हा ॥१०७॥

वारता तुमहिं सुनाय सकल लंकापुर जारी।
बहुरि राम ह्यां मिले आइ रछिस सब मारी॥१०८॥
ए सब कथा सुनाइ पवन करि दूत पठाये।
ता पीछे चलि जाहु समीप स्वामी जिय भाये॥१०९॥
ये सुरसति के वचन सुनत कमला सुष पायौ।
बहुत प्रसंसा करि करि तब पवन बुलायौ॥११०॥
सुनहु पवन तुम पुत्र मोर यह कीन्ह उपगारा।
मोहि रघुनाथ की कथा सुनाय गये सागर पारा॥१११॥
बहुरि राम मोहि मिलाय कराइ रछिस सब मारी।
तातें तोसों कहत हों सुत प्रीत विचारी॥११२॥
तुम हौ सबके प्रान दान तुम सबके हितकारी।
तातें हरि सों कहौ जाय यह बात हमारी॥११३॥
प्रथम बलभद्र सहोद्रा सों कहियौ वचन सु हमारा।
जो तुम करी सो उचित नहीं गुर जन व्यौहारा॥११४॥
जेष्ठ कौ धरमु जवह जु अष्ट दंपति को कलह निवारै।
यह न होय घर भेद करै काहू पछि सबारै।११५॥
बहुरि कहौ श्री जगंनाथ सों वचन सुनाई।
याही तें परसोतमा तुम नाम कहाई॥११६॥
सकल पुरुष स्त्रीन को शृंगार करावहिं।
वस्त्राभरन सजन सहित जात्रा जु पगावहिं॥११७॥
जो इस्त्रीन को कछु न करै आपनहि करै सिंगारा।
जात्रा को आपुन ही जाहि परसोतम व्यौहारा॥११८॥
जा कारन कलप वृछि हरयौ सक्र सों कियो संग्रामा।
ताको अब परि हरि गये प्रान प्यारी सतभामा॥११९॥
अपनी कथा कासों कहों ह्वै दीन वासा।
अब तुम कौनें कारन प्रभु भये उदासा॥१२०॥

जा कारन सिंध मथन कियो पीछे धरि वाधा।
सो प्रिया परिहरि गये कौनें अपराधा ॥१२१॥
जा देषे बिन जो न जीबै सो छांडिये कैसे।
स्त्री वध की तुमें लाज नहीं हम जात हैं जैसे ॥१२२॥

नृग कुल करि अवतार प्रथम ही रेणुका मारी।
रघुपति अति बड कुलीन ताडका संघारी ॥१२३॥
बहुरि सुनों जदुपति प्रसिद्ध पूतना निपाती।
अब कहा तुम काहे की लाज गारि कुल जाति न पांती ॥१२४॥

प्रभु सों बहुत कथा न कहिये इह लोग धिठाई।
हरि वियोग वज्र तें कठिन दुष कह्यौ न जाई ॥१२५॥
गयौ पवन तब ही कही बात हरि सुनि सचुपाई।
ता पीछे उपहार सहित सेवग चलि आई ॥१२६॥

देषि रमा मन हरष भई वाहिर जु रिसानी।
आइ लई परचारिका कछु बोलिव बानी ॥१२७॥
स्वामी मेरे सुध बुध श्रीकृष्ण नाम बुलावै।
जो तुम करौ कहौ सबै उनके जीव भावै ॥१२८॥

काहू के सिर की पाग लेइ काहू गारि दिबावै।
काहू कौ भै पारि काहू साट मरावै ॥१२९॥
काहू के ऊपर धूरि मेलि काहू धरि ठेलै।
काहू के वस्त्र चुराय कबहूँ सुरसति संग षेलै ॥१३०॥

इहि विधि करि उपहास बहुरि धाई जुग माता।
सो देषौ धौं कहा करै भगनी औ भ्राता ॥१३१॥
रथ पथ करि प्रवेस जहां षेलें निज नाहा।
आनंदित वचन करि चलि गई धौं काहा ॥१३२॥
हरि कौ चित चोरि लीन्हा अपनों मन हरि कौ दीन्हों।
पूप समरपन जुवति जूथ जोत्रा चार जु कीन्हों ॥१३३॥

वैष्णव संगत पाय कें मन भयौ प्रकासा।
श्री जगन्नाथ कौ दासानुदास गावै माधव दासा ॥१६०॥
॥ इति श्री रथलीला सम्पूर्णम् ॥

※ अथ श्री ध्यानलीला लिख्यते ※

श्री गुरु हरि चरनारविंद वंदन करि भाई।
रे मन सुनि परमारथा तोहिं कहों बुझाई ॥१॥
जिहिं प्रकार सुष पावहीं दुष दोष नसाई।
सदा आनंद जो चाहई सुनि एक उपाई ॥२॥
प्रथम सुमिर वृंदावना अति सुवन्न की सोभा।
भौंर भ्रमैं कुसुमावली मकरंद के लोभा ॥३॥
चलत लहरि जमुना जल शीतल द्रुम छाहीं।
सारस हंस मयूर आदि जहां निर्त कराहीं ॥४॥
कूजित कोकिल चकरवा सुनत मन सुष पाई।
मंद सुगंध पवन बहै सब रितु सुषदाई ॥५॥
ता भीतर है कलप द्रुम उतंग रंग विशाला।
पत्र महा मरकत मनी नव पल्लव प्रवाला ॥६॥
हीरा मुकतक पुहुप कली पदम राग फल मलइ।
अमी बूंद संतत झरै ताप त्रय तन हरई ॥७॥
सकल काम पूरन करै ताहि निगम वषानैं।
आलस तजि जो चितवै ताकौ मन मानैं ॥८॥
ता तर कंचन भोमि है मानिक गच ढारी।
कुसम रेनु रंजित भई षट ऊरमि कहाँ री ॥९॥

ता ऊपरि है जोग पृष्टि अष्ट दल कमल विराजै।
ता महि मध्य मुकुंद नंदनंदन सुष भ्राजै ॥१०॥
इंद्र नील मनि मेघ पुंज दलितांजन सोभा।
निल उत पल दल स्याम धाम सब कौ मन लोभा ॥११॥
चितै चितै चरनारविंद तल ललित सु रेषा।
लछिन सबै स पूजिता गुन करि है को लेषा ॥१२॥
अरि दर मीन कमल धुज अंकुस जव की सोभा।
ललितै कमला कमल पानि सिसु परस की लोभा ॥१३॥
अंगुरी ललित दसौ नषा मनि दरपन जोती।
मानों दल पंकज पलवै राषे धरि मोती ॥१४॥
मानों ससि निकलंक कामद सरूप भयो मीना।
सेवा करि हरि चरन निकट नष में भयौ लीना ॥१५॥
सुंदर स्याम स पूजिताजित कूरम की क्रांती।
नष ऊपर प्रतिविंब देषि सुरगन भये भ्रांती ॥१६॥
मनि मै कनक अलंकृता नूपुर पांव धारे।
अमित महा तम गुन जिता तत कहत न पारे ॥१७॥
जे पद अमर विरंचिता ते पद भौमि बिहारी।
ते पद परसि सिला सरीर मुनि वधू उधारी ॥१८॥
जे पद संकट विषंडिता मंडित अहि माथा।
ते पद प्रेम प्रछालिता वलि धरि दोउ हाथा ॥१९॥
जे पद अंड कटाह भेद आनी है गंगा।
ते पद आपन पान करै चलै त्रन चर के संगा ॥२०॥
सु मिलत उर वर वर जंवा त्रिभुवन के षंभा।
मानों विपरीत दोउ देह धरे मर्कत मनि रंभा ॥२१॥
कटि तट घटित नितंव विव पीतांवर संगी।
कनक सूत्र मनि मेषला बांधे हैं त्रिभंगी ॥२२॥

नाभि गंभीर रोमावली मानों भँवर की माला।
उदर उदार हारावली देषौ हिरदै विशाला ॥२३॥
वनमाला मुकतावली श्री बत्स निवासा।
कंवु कंठ कौस्तुक मनी मानों भानु प्रकासा ॥२४॥
स्निग्ध सु पीन वरतुल अजान लम्बी सु वाहू।
कंस केस ससि ग्रास करन कों प्रगटे हैं राहू ॥२५॥
सु र तर कुसुम सहित अली करन ऊपर राजै।
नील उत्पल दल करण रंध्र कुंडल तहां भ्राजै ॥२६॥
मंडित गंड जुगल भला मनि मकर समाना।
वदन सदन गुन सुष निधान को वरनें वषाना ॥२७॥
सरद सिसिर और रवि विमल कमल इक संग जो होई।
हरि मुष की नौछावरी करि डारिये सोई ॥२८॥
अधर सुधर सुंदर सिंदूर वंदित दुति धारी।
इंदु कुंद सम मंद हास सेवक सुषकारी ॥२९॥
सुंदर सु घटित नासिका ऊनित नै आई।
अधर विंव फल धरयौ चाहै सुक तुंड की नाईं ॥३०॥
नेंन विसाल प्रसंन सदा उपमा कों नाहीं।
जगत प्रकास को सूरज उपज्यौ है तहां हीं ॥३१॥
भौंह भाल तल ऊंच चलै दोउ धनुष समाना।
देषि डारयौ है काम चाप दर्प तजि कहूं लुकाना ॥३२॥
ललित लिलाट सु घंटिका तिलक गोरोचन सोभा।
लोक अलक अलि माल रही मुष कमल की लोभा ॥३३॥
स्निग्ध नील घन कुंचित केस वेस विराजै।
सिर्षा सिषंड चूडौ बडौ गुंजा पुंज तहां छाजै ॥३४॥
सकल सुभग सौभाग सींव लावंनि निधाना।
सुंदरता कौ सार देह देषि काम लजाना ॥३५॥

वेण रंध्र मुष पूरिता लोल कर अँगुरी सोहै ।
दिव्य राग करि तान मान सब जंतु विमोहै ॥३६॥
मोही गोपी आस पास मंडली कृत ठांढ़ी ।
रूप अनूपम देषि नाद सुनि अति रति वाढी ॥३७॥
प्रथक नितंव मंथर गती कुच भर कटि षीना ।
राजत रोमावली भली त्रिवली कटि भीना ॥३८॥
वेंन नाद रस स्वाद करत सब सुध गई भूली ।
पुलकित प्रमुदित अंग अंग भुज लता प्रफूली ॥३९॥
हरि की स्मित मंद हांस गोपी सागर गाजै ।
तरल तरंग विभंग भई सरम बूंद विराजै ॥४०॥
हरि की निरषणा कटाछि काम वान जु वरषै ।
भेदत मरम विथा करै गोपीं मान करषै ॥४१॥
हरि ध्यान अमृत पान करत सब ही मद माती ।
नैंन आलस करि भरि रही घरि रही एक पांती ॥४२॥
कटि तट घटित सषि सित केस वंदित दुति तानी ।
मदन मदांकुस व्याकुला बोलै उन्मत वानी ॥४३॥
चलत अधर डगमगत चरन घन नूपुर वाजै ।
मुकलित नैन कपोल लोल कुंडल तहां भ्राजै ॥४४॥
बहु प्रकार उपहार हाथ लीनें है ठांढी ।
हरि समुद्र संगम करन कों सरिता ज्यों वाढी ॥४५॥
कवहुं कै नैन हरि ऊपरि पोइ राषै ।
कबहुँक नैन भँवर करै हरि सौरभ चाषै ॥४६॥
इहि प्रकार वृज सुंदरी घेरि रही वनमारी ।
ता पीछे सिसु मंडली मंडित गुन साली ॥४७॥
कटि तट घटित किंकनी जंघन पर राजै ।
ठुमक ठुमक चलै कोमला पांय नूपुर बाजै ॥४८॥

कंठ व्याघ्र मुष लंविता मानिक लट डोलै।
अछिर विगतन आई हँसि हँसि कछु बोलै ॥४९॥
ता पीछे गोप मंडली मंडित गोपी नाथा।
वन विषान डंड पासि सबहिन के हाथा ॥५०॥

श्री कृष्ण समान सषा सबै रूप गुन सम सीला।
रहसि रास विलास करै षेलै बहु लीला ॥५१॥
वेनु बजावै गावहीं मूरछना जनावहिं।
सुरति नाद सुर घोर धरै सुर सप्त जनावहिं ॥५२॥

भुज वलीत कर ललित हांसि चातुरी निधाना।
हरि अनुकूल सषा सबै सेवग भल जाना ॥५३॥
ता पीछे वर वछ वली मंडली विराजै।
अली श्रृंग उत्थिष्टत भई मृदु मस्तक छाजै ॥५४॥

सुध फटिक दिवि धौल क्रांति पुर अग्र जु धावहिं।
माथे माथ लगावहीं ऊंच पूंछ चलावहिं ॥५५॥
ता पीछें वर वृषभ धौल मंडल भल सोभा।
हरि मुष कमल निरषि उनके मन लोभा ॥५६॥

कुकुध महा भर भार भरै तातै गति छीना।
हुँभारौ सुनि छुभित भये दस दिस भय भीना ॥५७॥
बैंन नाद रस स्वाद करत दोउ करन उठाये।
पुलकित प्रमुदित अति भये दोउ नास फुलाये ॥५८॥

ता पीछें गाइ धेनु मंडली बनि आई।
अति वछरान पिवावहीं सिसु संग लगाई ॥५९॥
श्रवन स्तन ना चूसन करै मुष भरि रह्यौ षीरा।
भीतर जाय न बाहिरा फैन परै सरीरा ॥६०॥
वेंन नाद आवरत वा पर वरत न गीती।
ऊंच दियें दोउ करन रही हरि परम प्रीती ॥६१॥

गाइन केरे नैन जुगल हरि मुष भये लीना।
थन भूंआर मंथुर गती तातें गति छीना ॥६२॥
बचन न आवै दांत त्रन रही ग्रास विसारी।
पुंछलिता अति लंविता घेरि रही बनवारी ॥६३॥

ता पीछे हरि सन मुषा सुरगन अस्तुति करहीं।
ब्रह्मादिक धन कामना हरि पद अनुसरहीं ॥६४॥
हरि के दछिन दिस मुनिगन अगम निगम जु पढहीं।
अरथ धरम की कामना हरि पद अनुसरहीं ॥६५॥

हरि के पृष्ठ भाग सकल जोगेसुर रहहीं।
मुकति काज सनकादिका समाधि जु करहीं ॥६६॥
हरि के वाम भाग अत्रेय सिध विद्याधर इछ्या।
चारन किंनर गंधरव वधू हरि भजन की इछ्या ॥६७॥

नृत्य गीत वादित्र सहित हरि को तोष करावहिं।
अंतरिछ नारद मुनी वेंना जु बजावहिं ॥६८॥
नाना विध गुन श्रुतिन रूप सुर सपत जनावैं।
गावहिं त्रिय गुन गान मान सपत राग लगावैं ॥६९॥

इहि प्रकार सेवा करै संतत इक रीती।
हरि सों प्रीत करावहीं गावहि बहु गीती ॥७०॥
इंदु कुंद संष धौल देह धरे सकल आगम जानैं।
कनक कपिस सीस केश दिये हरि कीरतन बषानैं ॥७१॥

अचल भगति वंछना करै सब संग उदासा।
इहि प्रकार चितै मना ब्रह्म तनै अवासा ॥७२॥
याही विलंवे ध्यान बृहद् ध्यान आगम निगम पुराना।
श्री गोपाल कृपाल श्री कृष्ण सब सुष को निधाना ॥७३॥
यह जे जपहि निरंतरा तिन कों कछु दुर्लभ नाहीं।
सकल सिद्धि सु वृद्धि होइ अंत हरिपुर जाहीं ॥७४॥

हरि तर अमृत सदा फलै मन विहंगम लुभाई ।
विष कंटक संसार वृछि ताहि जिन उरझाई ॥७५॥
हरि ध्यान अमृत पान करौ हरि के गुन गावौ ।
हरि की कथा श्रवन सुनौ हरि को सिर नावौ ॥७६॥
हरि समरथ सबही विधी हरि रिध सिध दाता ।
हरि है मित्र समंध गुरू है पितु अरु माता ॥७७॥
हरि जल निधि ते थल करै अगनि कौ सीतल करई ।
अरि को मित्र करै हरि आपदा सब हरई ॥७८॥
सोइ हरि नील सिषर गिरि करै भोग विलासा ।
श्री जगंनाथ कौ दासनिदास गावै माधव दासा ॥७९॥

॥ इति श्री ध्यानलीला संपूर्णम् ॥

ॐ अथ श्री स्वयंबरलीला लिख्यते ॐ

जै जै जै श्री जगन्नाथ जदुनाथ मुरारी ।
द्वारावती प्रति श्री कृष्ण विजै रुकमनि रतिकारी ॥१॥
देस विसद विदर्भ नाम कुंदनपुर भ्राजा ।
धरम परायण नीति निपुन भीषमक नाम राजा ॥२॥
रुकम रुकम रथ रुकम सेन रुकम वाहु रुकम माली ।
पांच पुत्र कन्या नाम रुकमिनी ताकी कीर्ति विसाली॥३॥
अति गुनवंत सु सीलवंत सर्व सिरोमनि नारी ।
लछिन सकल समग्र विनै भूषन सुकुमारी ॥४॥
देइ विप्र गुर गाइ अगनि पर चरजा करई ।
दान पुन्य जप तप व्रत विष्णु कौं समर्पन करई ॥५॥

श्री कृष्ण कथा संतत बूझई जो कोई ग्रह आवै।
ताकौ बहु सनमान करै जो हरि गुन गावै ॥६॥
यह सुनि देस दिसंतर तें गुनी जन आवहिं।
ललित प्रबंध रचित कवि हरि कथा सुनावहिं ॥७॥
जिहि प्रकार हरि जनम भयौ गोकुल महि गयऊ।
बाल चरित्र विचित्र सुनत आनंद तब भयऊ ॥८॥
वकी सकट तृनावरत जमला अर्जुन तरु भंजन।
अघ वक वछ सुधेनुका काली सिर गंजन ॥९॥
पांच वरष के बाल कृष्ण सुने जे रुकमिनी।
चित्र लिषित संतत भई ईसुर रूप मन में गुनी ॥१०॥
सात वरष के बाल कृष्ण गिरवर कर धारी।
इंद्र कोप कर महा वृष्टि जल लियो उवारी ॥११॥
सुरभी सक्र अभिषेक सुनत सानंद भई वाला।
काम विजै सुनि सुंदरी दई कनक की माला ॥१२॥
व्योम संषचूड वृषभ केसी वृध सुनत कुवांरी।
कंप पुलकत तन वहि भयो दयो हार उतारी ॥१३॥
मल्ल कुवलिया पीड कंस वध सुनि आनंदी।
द्वादस वरष के श्री कृष्ण करम गावहिं सब वंदी ॥१४॥
बहुरि सुन्यौ व्रत बंध सुन्यौ विद्या अभ्यासा।
मृतक पुत्र गुर दछिना सुनि मन भयो हुलासा ॥१५॥
काल जमन जरासिंध जीत जादव हितकारी।
दिव्य नगर निवसत हरी द्वारिका मुरारी ॥१६॥
सभा सुधरमा वासि सदा श्रुति स्मृति विचारै।
निज विवाह इंछा करै नहिं वचन उचारै ॥१७॥
इहि विधि बहुत प्रकार विचित्र कथा जब सुनियां।
करि है श्री कृष्ण स्वयंबरा मन मनहिं जु गुनियां ॥१८॥

हरि गाइन गाथा गावहीं तिन को तब विदा जु कीन्हें।
वस्त्र आभरन सहित धना बहु रतन जु दीन्हें ॥१९॥
श्री कृष्ण कथा मन मन वसी कृष्ण नाम उचारै।
श्री कृष्ण सरन संतत भई श्री कृष्ण रूप बिचारै ॥२०॥
श्री कृष्ण समागम वंछई कृष्ण मेघ देषि जीवै।
श्रीकृष्ण विरह संतत करै नहीं श्रीकृष्ण कथामृत पीवै॥२१॥
इहि प्रकार रुकमनि रहै कन्या रतन सरोती।
जनक जननी सब सुहृद वंधु पुरजन करै प्रीती ॥२२॥
समै जानि राजा रानी रुकम बड पुत्र हंकारा।
कन्या दैन विवाह काज कीजे वर को विचारा ॥२३॥
राजा कहै इहि मत हमार कन्या श्रीकृष्ण को दीजे।
रानी कहै भल भल यहै निहचै करि कीजे ॥२४॥
रुकम कहै सुनहु राज यहु भल कहै न कोई।
कुल आचार विचार नहींत वर जोग न होई ॥२५॥
गाय चराइ चराइ सदा ग्वालन संग रहई।
बेंन बजाय बजाय सदा वन भोजन करई ॥२६॥
ग्वालनि की संगति करि करि वह भयउ ग्वाला।
ताको कन्या देय कैसे है हों ग्वाल को साला ॥२७॥
हम कुलीन सब सजन बंधु हँसि हैं सब कोइ।
यह कलंक मोहि लागि है अहीर बहनोई ॥२८॥
बहुरि कहै नृप सुनहु पुत्र वह अहीर न होई।
जादव कुल अवतार विष्णु बोलै सब कोई ॥२९॥
पुत्र कहै सुनहु तात मेरे वचन प्रमाना।
विष्णु विष्णु जे बोलहु विष्णु सुनहु व्याख्याना ॥३०॥
विष्णु व्यापक है रह्यो विष्णु है देवन देवा।
सर्व भूत सम पेषिये इहै विष्णु की सेवा ॥३१॥

विष्णु प्रीत निज करम धरम दान ध्यान जु कीजे ।
यह नहीं देषी सुनी विष्णु कों बेटी दीजे ॥३२॥
यह विवहार विवाह समसर स्यौ कीजे ।
तातें यहु कन्या कुलीन सिसुपालहिं दीजे ॥३३॥

पुत्र आधीन वृद्ध नृपति मौन ह्वै जु रह्यौऊ ।
बह जुवराज रुकम उठि दम घोष पुर गयऊ ॥३४॥
लगन धराई विचार वेगि सिसुपालहि वरि आयौ ।
देस देस आगम प्रवात तब दूत पठायौ ॥३५॥

देवि मंडप सूत्रधार संभार विधाना ।
देषि विकल भई रुकमिनी बात सुनी जब काना ॥३६॥
तुरंतहि करि विचार विप्र पांइ वंदन कीन्हा ।
पत्र लिषत मुद्रित कियो विप्र हाथ जु दीन्हा ॥३७॥

वेगि जाय विप्र द्वारिका श्री कृस्ण को पत्र सुनावौ ।
पांइ लागों वलि जांव विप्र मोहि श्री कृष्ण मिलावौ॥३८॥
चले विप्र आनंद करत किलमिष सब गयऊ ।
जनक जननी कुल जन्म मोर आज सफल भयऊ ॥३९॥

पुरी द्वारिका देषि हों गोमती करि हों सनाना ।
दूत काज में जाइ हों पाइ हों पद निरवाना ॥४०॥
जाको ध्यान धरत मुनी मन दृढ करि राषी ।
सो सरूप जाय देषि हों इन देषौ आषी ॥४१॥

श्री कृष्ण आलिंगन पाइ हों इह स्वंगज काछै ।
मेरौ कारज पहिल भयौ रुकमनि को पाछै ॥४२॥
करत मनोरथ पथ पथां सो निकट जू गयऊ ।
देषि द्वारिका दिव्य पुरी आनंद तब भयऊ ॥४३॥
सफटीक महा मनि ऊँच द्वार गोपुर भल सोहै ।
हेम कपाट कनक कोट तोरन मन मोहै ॥४४॥

कलित सिषंड पारावती कनक कंगूरा राजै।
रतन जटित जाला मुषा मनि गन बहु भ्राजै ॥४५॥
कनक कलस अवर धबल धुज ग्रह ग्रह पर छाजै।
मरकत मनि मै भांति विचित्र झरोषा राजै ॥४६॥

भूनस भूमि विचित्र महामनि षंभ विसाला।
रतन षचित वर नारि रहस्व मनि पत्र प्रवाला ॥४७॥
मर्कत मनि मै वेदिका विद्रुम चहुँ पासा।
सुध धवल गृह अति उतंग मानों कैलासा ॥४८॥

रतन षचित गज देह हेम परजंक विराजै।
मुकताहार सु लंविता चंद्रा तव्य छाजै ॥४९॥
रतन प्रदीप प्रकास रतन पांति विराजै।
रतन रचित गृह द्वार देहरी अंगणा भ्राजै ॥५०॥

जगमगात नग ऊपरै पुरी कछु वरनी न जाई।
वन उपवन गिर सागरा गढ षाई ॥५१॥
पुरी द्वारका अति समृद्ध कछु कह्यो न जाई।
सुपच भवन्निधि कोटि देषि विप्र रह्यो लुभाई ॥५२॥

कहूं एक वेद पुरान सास्त्र श्रुति स्मृति विचारै।
कहूं एक होम जग्गि जप तप विसतारै ॥५३॥
कहूँ एक दान ध्यान जप तप कछु देव द्विज पूजा।
कहूं एक विद्या वाद विभै सम और न दूजा ॥५४॥

कहूं नृत्य गीत अति घना बहु बाजन बाजै।
कहूं सूर सुभट नर गज रथ असु छाजै ॥५५॥
विजै पताका कोटि कोटि जदुकुल विस्तारा।
आनंदित नर नारि अलंकृत हेम मनिहारा ॥५६॥
अठ्यासी शत तीन कोटि गुरु मुष पाठ पढ़ावैं।
एक एक के सहस्र सिष्य संख्या कहत न आवै ॥५७॥

तहां गृह गनना को करै जदुकुल विस्तारा।
भोज अंधक मधु विष्णुदास रहै वंस अपारा ॥५८॥
सभा सुधरमा सरोवरा जदुकुल पर फूला।
दिनकर श्री कृष्ण निरषि मुष आनंद को मूला ॥५९॥
देषि विप्र श्री कृष्ण रूप कछु कह्यौ न जाई।
जहां जहां दृष्टि परै तहां तहां उरझाई ॥६०॥
लोचन चारु विशाल अरुन पंकज दल क्रांती।
काम कोदंड विडम्बनी भ्रू भंग की भांती ॥६१॥
ललित लिलाट मनोहरा चंदन तिलक विराजै।
कलित कपोल मिलित श्रुति मनि कुंडल भ्राजै ॥६२॥
कनक मुकुट सिर सोभिता उन्नत सुभ नासा।
वदन मदन मन मोहना विंबाधर भासा ॥६३॥
कंठ अकुंठित मनि धुरा वर बाहु विराजै।
जल दल स्याम अभिराम केयुर कंकन छाजै ॥६४॥
वक्ष स्थल भल चरन चिन्ह द्विज देख्यो जबहीं।
सावधान श्री कृष्ण पीतांवर ढारयौ तबहीं ॥६५॥
उर विसाल वनमाल उदर रोमावलि राजै।
नाभि गंभीर स किंकनी कटि पट भल छाजै ॥६६॥
जानु जंघ मनि षंभ भवन आधार मुरारी।
चरन कमल मनि नूपुरा मुष ससी अहारी ॥६७॥
इहि प्रकार हरि देषि विप्र संतोष जु भयऊ।
पूरन मनोरथ थकित कृपा चित्र लिषत सम भयऊ ॥६८॥
देषि दयाल दिसंतरी विप्र है पंथ चारी।
धूर धूसर अमित जानि तब उठे मुरारी ॥६९॥
वंदन करि धरि दोउ हाथ विप्र आलिंगन कीनों।
लै आये मंदिर मुरारि निज आसन दीनों ॥७०॥

पांइ पषारि पादोदका सिर सींचन कीन्हों।
वर मधु परक सु स्वागता अरघादिक दीन्हों ॥७१॥
दिव्य सुगंध तेल लाय मरदन जु कराई।
करि उदवरतन उष्ण उदक असनान कराई ॥७२॥

अमारजन करि दिव्य देह अंबर पहराई।
देइ पवित्र तिलक करि गंध चंदन जु लगाई ॥७३॥
माल धूप और दीप देइ आचमन कराई।
बहु प्रकार भोजन विधान मिष्टान षवाई ॥७४॥

पुनरपि आचमन कराइ कें मुष वास जु दीन्हा।
सुष सज्या सुवाय पद संवाहन कीन्हा ॥७५॥
इहि विधि करि अतिथ धरम द्विज श्रम जु गयऊ।
जानराय श्री जगंनाथ बूझत तब गयऊ ॥७६॥

हे द्विजवर निज कुशल कहौ कौन देस तुम्हारौ।
तुम आगम पवित्र भयौ यह नगर हमारौ ॥७७॥
सदा धरम की रच्छा करौ तुम मन अविकारी।
जेन केन संतोष विप्र कुल कोटि उधारी ॥७८॥

असंतोषी द्विज लोलुपा पर नसावै।
संतोषी द्विज देषि देव मुनि मस्तक नावै ॥७९॥
जाके राज वसौ तुम सु कुशल परिवारा।
जो तुम्हारी रच्छा करै ताहि हरि रषवारा ॥८०॥

बन गिर दुर्गम विकट वाट संकट तरि आयौ।
कौन सु काज कहौ मोहिं करों तुम्हारो भायौ ॥८१॥
इहि प्रकार हरि बूझियौ द्विज प्रीत कराई।
द्विज हर्षित हरि सनमुषा सब कथा सुनाई ॥८२॥
देस विदर्भ कुंदनपुर भीषमक नाम राजा।
तहां हमारौ निज निवास सुनों आयौ द्विज काजा ॥८३॥

कन्या नाम सु रुकमिनी सुंदर राजकुमारी।
मनसा वाचा निस दिवस सो शरन तुम्हारी ।।८४।।
जनक जननि जब तुमहिं वरन कों बुधि विचारी।
जोवराज रुकम तिन यह कथा निवारी ।।८५।।

अति चंचल चलि गई यौ जाय सिसुपालहि भेंटा।
तिलक सँभारि कें आयौ दमघोष को बेटा ।।८६।।
दंत वक्र जरासिंध साल व संग बुलाये।
गज रथ हय नर सवल [साजि कुंदनपुर आये ।।८७।।

आगवनी गुरवार पंचमी लगन धराई।
देषि विकल भई रुकमिनी मुरछा तब आई ।।८८।।
स्वस्त भई छिन एक अंतर तब मोहि बुलाई।
तुमहिं समीप मोहिं तुरंत करि दियो पठाई ।।८६।।

ताकौ यह निज हस्त लिषत पत्र प्रान समाना।
तुम्हारे हाथ समरपन कियौ भगवाना ।।६०।।
पत्र पाय पुलकित तनु हरि हरष जँभायउ।
मुद्रा फेरि प्रगट करी वांचन तब लयउ ।।६१।।

अश्रु कंठ पुलकित तनु मन उहां जु गयउ।
प्रेम चिन्ह जु चीरी देषि चित्र लिषित सम भयउ ।।६२।।
न परै हरि किहुँ प्रकार पत्र पठन मुरारी।
बहुरि बहुरि देषि रहे अति प्रीति विचारी ।।६३।।

लेहु विप्र वर तुमहिं लेहु मोहि बांच सुनावहु।
अरघ जात सिसि विष्ट करि पल्हरावहु ।।६४।।
श्री कृष्ण हाथ तें लियो विप्र पत्र प्रेम जो सांचा।
पढौ विप्र प्रथम पंकति रुकमिनि की वांचा ।।६५।।
स्वस्ति स्वस्ति मेहा मय जै जै श्री मुरारी।
श्रीकृष्ण कृष्ण कुल दीप रुकमिनी दासि तुम्हारी ।।६६।।

तब गुन सुनि सुनि श्रवन सदा तब रूप विचारी।
तब गृही परिचारिका में रही लाज विसारी ॥९७॥
रूप वंत धरम वंत सील गुनवंत सो स्वामी।
विद्या विनै विवेक वंत सो अंतरजामी ॥९८॥
कौन सु कन्या है कुलीन जो तुमहीं न वरई।
कौन सु पंडित वेद छांडि पाषंड अनुसरई ॥९९॥
में तुम पति कर वरे तुम दासी करि वरहू।
सरनाई करि असै देहि मोहिं जिन परि हरहू ॥१००॥
यहु निंदक पुरुषारथा अनुचित व्यौहारा।
महा सिंघ सनमुष वलि जैसे हरै सिरकारा ॥१०१॥
रूप पुरी तामूं पृष्ठ सों रन सींग लै गाई।
पांय पषारि स पूजिता स्वस्ति बच पढाई ॥१०२॥
वस्त्राभरण अलंकृता सुध कपिला गाई।
जहां आदन विधान तहां क्यों पत्र कसाई ॥१०३॥
वाइस ग्रास कराय कें पंछीराज हंकारा।
यहु नहीं सुनी कहूँ सूद्र मुष वेद उचारा ॥१०४॥
जहां जहां जाको निरमान होय सो तहँ चलि जाई।
यहु न कोय अज्या मुष कुमहांड समाई ॥१०५॥
जे हवि हवै हुतासना सो क्यों स्वान षवाई।
जो नारायण जोगि दरवि सो क्यों प्रेत पुजाई ॥१०६॥
जो कछु दान पुन्य जप तप बृत में कियो बिचारी।
ताकौ फल मोहि इहै होय सो मेरो हस्त गहौ मुरारी ॥१०७॥
जानि विवाह प्रथम दिवस सब सैंन समेता।
देस विदरभ आवहो यह सुनहु सँकेता ॥१०८॥
जरासंध सिसपाल साल वल हतौ मुरारी।
मोहि विनीत उधार लेहु निज जस विस्तारी ॥१०९॥

जो आशंका करौ मोर अंतर पहुँचाई।
बंध तुम्हारौ बधे बिनु तोहि हरउ न पारी॥११०॥
मछ कूरम वाराह नरसिंघ तन होई।
जब तुम्हें कौन सिषावई बुधिवंत है कोई॥१११॥
तुम जानौ सब की गती बुधिवंत मुरारी।
अथवा सु उपाय मोर मैं दासि तुम्हारी॥११२॥
कुल हमार आचार प्रथम दिन कन्या जाई।
नगर बाहर कुल देव्या जहां पूजा जु कराई॥११३॥
देवी लै पूजा समै आय हौ जादव नाथ।
मोहि लै रथ बैठाय हौ निज धरि दोऊ हाथ॥११४॥
तुम्हारे चरन जु वंछई ब्रह्मादिक देवा।
मुनिगन सिव सुकादि सब करें तुम्हारी सेवा॥११५॥
तहां हम कौन वराकनी हमारे बुलाये आवै।
पंग अंग ऊच चहै गगन ससि हाथ क्यों आवै॥११६॥
दीन अरथ सब साधिका हरि दीन दयाला।
सरनाई विजै पंजरा सुनि विरद विशाला॥११७॥
अस विचारि सब परिहरि मोहि तुम्हारी आसा।
तुम करुना मय श्रीकृष्ण कबहुँ जिन होउ उदासा॥११८॥
जो न आवौ तौ सुनौ सति अनसन ब्रत करि हों।
यह प्रकार सत जनम जनम तुमही कों बरि हों॥११९॥
यह रुकमिनि को पत्र पवित्र सुनौ जदुनाथा।
विप्र अलिंगन करि हरि धरि दोऊ हाथा॥१२०॥
सुनहु विप्र वर मन हमार रुकमिनि परि हरई।
असन वसन नहिं भावई निस नींद न परई॥१२१॥
जानत हौं सब समाचार जानत हौं व्यौहारा।
जानत हौं वह रुकम दोष मेरौ व्याह निवारा॥१२२॥

मार मथन करि सत्र सेंन रुकमनि को हरि हों।
देषत सूर सकल नृपा मुष धूरि जु भरि हौं ॥१२३॥
यह कहि सूत बुलाइ यौ आन्यौ रथ साजी।
सेव सुग्रीव मेघ मुषि बलाहक बाजी ॥१२४॥

विविध पताका विमल दुती दर्पन बहु भ्राजा।
कनक षंभ मनि तोरना गरूड ध्वज राजा ॥१२५॥
संष चक्र सारंग धनुष बांभन बैठायौ।
षडग चरम गदा कवचादि सब सस्त्र चढायौ ॥१२६॥

प्रथम विप्र आरोपि कें सारथी बुलाई।
ता पीछे आपुन चढ़े रथ जादव राई ॥१२७॥
नंदी घोष रथ नाम कथा कछु कही न जाई।
जा देषें आनंद होय दुष दूर पलाई ॥१२८॥

द्वारावती तें चढ़े श्रीकृष्ण एक राती में आई।
देस विदर्भ प्रवेश कियो काहू न जनाई ॥१२९॥
नृपति कुंदन पुर पुत्र सब सब करम करावै।
पुर मंदिर राजा राहै हाट वाट वीथी समरावै ॥१३०॥

चित्र विविध धुज राजत तोरन वंदन वारी।
वस्त्र आभरन अलंकृता वृर नारि सँवारी ॥१३१॥
देव विप्र पूजा करी विप्र भोजन जु कराई।
सपूजित द्विज विधिवता स्वस्ति बचन पढाई ॥१३२॥

वृत कन्या असनान विहितर विति वाला।
मंगल सूत्र अलंकृता मनि मुक्ता माला ॥१३३॥
रिग जजु स्याम अथरवणा मंगल वचन पढाई।
रष्या बांधी प्रोहिता ग्रह सांत कराई ॥१३४॥
कनक राजित वसतर तिल गुड गोदान जु दीन्हीं।
विधि बिधान भल जानि नृपति द्विज पूजा कीन्ही ॥१३५॥

इहि प्रकार सिसुपाल नैन अंजन जु कराई।
कर कंकन सिर मौर हरद देह लगाई ॥१३६॥
गज रथ हय नर सकल साजि कुंदनपुर आई।
भीषमक नृप पूजा करी बहु बास दिवाई ॥१३७॥
इहां आय कदाचित श्रीकृष्ण रुकमिनि हरि लैहै।
जीति जुध करि आनि कन्या सिसुपालहि दैहै ॥१३८॥
अस विचारि नृप पहर चारि कुंदनपुर आये।
समाचार सुनि सेष बलदेव जु धाये ॥१३९॥
ताल धुजा रथ साजि बाज हल मूसल जू चढाये।
गज रथ हय पदाति सहित कुंदनपुर आये ॥१४०॥
तिहि औसर वर नारि रुक्मिनी पंथ निहारै।
श्रीकृष्ण बिलंबितु जानि कें मन मन ही विचारें ॥१४१॥
नहिं आये अद्यापि पीतंबर संष चक्र गदा पदमधारी।
नहिं आये सो द्विज हमार संदेह हकारी ॥१४२॥
तीन पहर रजनी गये जैहै जू बिबाहा।
कहा करों कित जाव निकट नहीं निज नाहा ॥१४३॥
अथवा आय मेरौ संदेस सुनि उदिम न कियो मुरारी।
बहुरि रहे फिर देषि दोष विगुन बिचारी ॥१४४॥
वे निर्वरति निरंजना निरूपम गुन रासी।
में कुमति मति चपल जानि मोते भये उदासी ॥१४५॥
विध संकर प्रतिकूल भयौ में अभागनी नारी।
गौरी देवी बिमुष भई हेमंत कुमारी ॥१४६॥
इहि बिधि चिंता करै श्रीं कृष्ण आगमन की आसा।
फरकित उर भुज बाम नयन मन भयौ हुलासा ॥१४७॥
तिहि औसर अंतहपर जब द्विजवर चलि आयौ।
देषि प्रसन्न बदन रुक्मनि तबही सचु पायौ ॥१४८॥

समाचार सब बूझिये विप्र कहे बुझाई।
पुर प्रवेस पूजा प्रकार सब कथा सुनाई॥१४९॥
श्री कृष्ण आगम सुन्यौ जवै वंछत फल पाई।
प्रेम मगन आनंद भयौ कछु कह्यौ न जाई॥१५०॥
कहै द्विजवर सुनौ देवी तें कहा पुनि जू कीन्हों।
सुनों प्रिये बचन परम हित कछु उतर न दीन्हों॥१५१॥
कहै रुकमिनी सुनो विप्रवर जस तुम उपगारी।
अस कछु दान न देषों रहि मन मनहिं बिचारी॥१५२॥
तीन भवन को राज देउँ तउ तुल्य न होई।
विप्र चरन वंदन करै रहि पांय परि सोई॥१५३॥
जो नर लछिमी कों नवै रिधि सिधि निधि नापै।
सो लछिमी ताकों नवै ताकी कौन चलावै॥१५४॥
राम कृष्ण आगमन जानि आगे ह्वै गयो राजा।
बहु प्रकार उपहार सहित करि राम कृष्ण की पूजा॥१५५॥
श्री कृष्ण आगमन सुन्यौ जवै बिदरभ पुर वासी।
नर नारी सब ध्याईयां देषें रूप की रासी॥१५६॥
केउ कहै देषौ हे सषी श्रीकृष्ण मुष की लुनियाई।
केउ कहै देषौ नैन युगल षंजन उरझाई॥१५७॥
कोउ कहै देषउ नासा सुकतुंड सु ठाना।
केउ कहै देषौ भौह भाल दोउ धनुष समाना॥१५८॥
केउ कहै देषौ अधर विंव फल सुरँग सुढारा।
केउ कहै देषौ विशाल हृदै मनि मुक्ता माला॥१५९॥
केउ कहै अजान बाहु कटि सिंघ समाना।
केउ कहै देषौ चरन नष सब सुष कौ निधाना॥१६०॥
जे जे नर सिसुपालहि देषि पुनि श्रीकृष्ण को देषें।
चिंतामनि ज्यों पाय कच मनि को उपेषें॥१६१॥

जैसी रुकमिनि रूप वंत तैसी ये रूप की रासी ।
इन परिहरि सिसुपालहि दैहैं नृपति मति नासी ॥१६२॥
ए रुकमिनि के स्वामी रुकमिनि प्रिय रानी ।
ऊभै जोग बनाइयौ रचना विधि वानी ॥१६३॥

जो कछु सुकृत कियो हम दान पुन्य विचारी ।
ताकौ फल हमें यहै होउ रुकमिनि हस्त गहौ मुरारी॥१६४॥
इहि विधि प्रेम कला निवंध बोलें नर नारी ।
पुरुष अषिल हरषत भये मुष निरषि मुरारी ॥१६५॥

कोउ कहै कहां ते आइ यौ है रूप निधाना ।
कोउ कहै कुंदन पुर प्रकास सुंदर भान समाना ॥१६६॥
कोउ कहै अमृत की रासि लोचन करहु पाना ।
कोउ कहै वर मायाघर कोउ कहै पुरुष प्रधाना ॥१६७॥

कोउ कहै सींह प्राकरमा रुकमनि को हरिहैं ।
कोउ कहै देषि देषि सिसुपाल सालव मान मर्दन करि हैं॥ १६८॥
इहि प्रकार नर नारि श्रीकृष्ण अनुराग करहीं ।
अंतहपुर तजि देवी पूजन कौ कन्या आई ॥१६९॥

जितवानी गति माधुरी मग पग पग चलि आई ।
श्री गोविंद समागमा मति बुधि लगाई ॥१७०॥
आस पास सषी मंडली मंडित दिज नारी ।
बहु प्रकार उपहार हाथ लीनें प्रचारी ॥१७१॥

गुपत राज भट सूर शस्त्र धरि करि रषवारा ।
भेरि मृदंग शंष बाजहिं बंदी जन कै बारा ॥१७२॥
देवी दैवालै मिली जाय कर चरन पषारी ।
करि आचमन ससंजता मंडित दिज नारी ॥१७३॥
धूप दीप नैवेद वेद विधि करि उपचारा ।
पूजा करि तब रुकमिनी इह मंत्र उचारा ॥१७४॥

नमो नमो अंबिका देवि सिव सक्ति भवानी।
पति हमार श्री कृष्ण होहु गदा पदम सारंग पानी ॥१७५॥
आसिषा पाइ करि प्रनाम सिर धरि सुकुमारी।
देवालौ तजि चली देवि व्रत मौन निवारी ॥१७६॥

रतन अलंकृत सषी अंस कर धरि चल आई।
माया देवी निरमि वीर मोह कराई ॥१७७॥
स्मामा सुभग समाधि भाग गति हंस सम सोहै।
नूपुर चरन विराजिता धुनि सुनि सब मोहै ॥१७८॥

ललित नितंब समरपिता रतन मेषला भासा।
बाजत उरज विराजमान मनिहार प्रकासा ॥१७९॥
कुंडल मंडित गंड जुगल मुष चंद्र सु नासा।
अरुन अधर दुति दरसन मिलित सोभित मंद हासा ॥१८०॥

कुंतल संकित ईछना अवलोकन लीला।
देषि नृपति मूरछित भये जाको यह सीला ॥१८१॥
केउ गज सौ केउ रथ सौ केउ अस्व सौ लर षरहीं।
मूढ नृपति सब सस्त्र छांडि छित तल षिस परहीं ॥१८२॥

जात्रा के छल रुकमिनी सब को मन हरई।
निज सोभा सौभाग श्रीकृष्ण को समरपन करई ॥१८३॥
इहि प्रकार मंद मंद चलै श्री कृष्ण निहारै।
ऊनित मुष करि वाम पानि निज केस सँभारै ॥१८४॥

दृष्टि परे हरि सनमुषा रुकमिनि हरि देषी।
प्रीत परस्पर नैन नैन संवाद विशेषी ॥१८५॥
तिहि औसर रथ चढाइ रुकमिनि हरि लीन्हीं।
लै निज रथ बैठाय परतंग्या सति कीनी ॥१८६॥
देषत सूर सकल नृपा ठग मूरी षाई।
सींह विभाग जु लै गयो स्वान रहे षिसाई ॥१८७॥

धृग हमार छत्री कुल धृग हमारी बडाई।
जो कन्या सिसुपाल वरै सो ग्वाल लै जाई ॥१८८॥
यह कहि सब नृप धाइ या वान घृष्टि कराई।
जादव सैना श्रमित देषि रुकमिनि भै पाई ॥१८९॥
हरि निरभै करि धनुषवान धरि सैंन संघारी।
संकर्षन गदा सहित जादौ जै जुगति मुरारी ॥१९०॥
इहि प्रकार सिंघार भयौ जरासिंध गयौ हारी।
मलिन वदन सिसुपाल देषि बोलै बांह पसारी ॥१९१॥
सुनहु सिसुपाल तुम साहसमान ना करि बदन मलीना।
हानि लाभ प्रिय अप्रिय सुष दुष ईस्वर आधीना ॥१९२॥
सूत्रधार वस दार नारि जैसें निरत दिषावै।
अस ईस्वर आधीन लोक पराजै पावै ॥१९३॥
इहि प्रकार सिसुपाल प्रवोधि गयो निज देसा।
करि सनान सु वेस पहिर फेरयौ वह वेसा ॥१९४॥
श्री कृष्ण हरी रुकमिनी रुकम आगे गयो धाई।
पहुँच्यो जाय जनारदन दुष्ट वचन सुनाई ॥१९५॥
सुसा हमार हरन करि कहां जाहि पलाई।
देव जोग हवि भाग काग जैसें जाय जुठाई ॥१९६॥
विहँस श्री कृष्ण धनुष छेदि यौ मारयौ पवाना।
आन धनुष संधान कियौ छांड्यौ भगवाना ॥१९७॥
इहि प्रकार सब सस्त्र गये विरथि जब भयऊ।
कर गहि श्री कृष्ण केस षडग मारन तब लयऊ ॥१९८
पांइ परी रुकमिनी धाइ भाई लियो छुडाई।
करि विरूप मूंड मूंडि तब बांध्यौ रथ लाई ॥१९९॥
तिहि औसर बलदेव दयाल जु आयौ धाई।
बंधन छुडाय रुकम के श्रीकृ ण सों करी रिसाई ॥२००॥

अहो असाधि करम श्रीकृष्ण भल नहीं तुम कीन्हा।
विटव विरूप करि नहीं बंधु बांधि तुम लीन्हा ॥२०१॥
जो अपराधी होय बंधु तौ दोष न लीजे।
काम क्रोध करि हत भयौ ताको बध न कीजे ॥२०२॥

कहै रुकमिनी स्यौ बलिदेव दयाल बिचारी।
दोष हमारौ धरहु जिनि सुनों राज कुमारी ॥२०३॥
छत्री कौ यह धरम विसम रचि दियो विधाता।
जुध विधान बिघात करै भ्राता कौ भ्राता ॥२०४॥

जो जस करम करै नर सो तैस फल पावै।
यह अग्यान नृबंध जो आनै दोष लगावै ॥२०५॥
जनम मरन जरा कृस विरूप देह को बिकारा।
अवकृत अजर जो अमर आतमा देह तें न्यारा ॥२०६॥

इहि प्रकार प्रमोध रुकमिनी निज राम की बानी।
सुनि मन को संताप गयौ रह्यौ रुकम अभिमानी ॥२०७॥
बिन पलटाये रुकमिनी श्री कृष्ण बिन रन जीती।
कुंदनपुर प्रवेश न करि हौं यह प्रतीती ॥२०८॥

जहां ही रह्यौ करि घर घरा बड नगर बसावा।
नांव भोज कट पुर निवास निज लोक बुलावा ॥२०९॥
इहि प्रकार रन जीति श्रीकृष्ण रुकमिनि जब आनी।
पुरी द्वारका कृत प्रवेस बोले जै जै बानी ॥२१०॥

कुरु संजै कंबोज बिदरभ कुंतीपुर जाई।
नाना नृप आमंत्रण करि आनै है बुलाई ॥२११॥
अति विचित्र सो पवित्र मंडप जु छवाई।
कनक षंभ मनि तोरना रतन बेदी जु बनाई ॥२१२॥
बेदी पूरब भाग तबही मंगल कलस धराई।
बेदी पछिम भाग वलित मुकाता चौक पुराई ॥२१३॥

चौक ऊपर पदम आसना बैठे जदुराई।
पूरव मुष वसुदेव पुत्र संकरषन भाई ॥२१४॥
उत्तर मुष भीषमक नृपति कन्या लै वैसे।
वेदोक्त प्रकार आचार किये सब तैसे ॥२१५॥
आसन स्वागत अरघ पाद दै आचमन कराई।
वर मधु परक करि आचमनी वस्त्र भूषन पहराई ॥२१८॥
वर पूजा साषा उचार संकलप कराई।
कन्या कोमल करतला वर हस्त धराई ॥२१९॥
कन्या तात निकट तजि वर भाग जु जाई।
वर कर ललित कन्या सिर सिंदूर भराई ॥२२०॥
ता पीछे कुश कुंडिका बहु होम कराई।
लै ज आहूति पर दछना हस्त हरद लगाई ॥२२१॥
इहि विधि बहु प्रकार विवाह आचार कराई।
निगम आगम मुनि समूह पर दछि जु दिवाई ॥२२२॥
महा महोछौ घर घरा आनंद बधाई।
जदुपुरि प्रमुदित नारि सवै आरती लै आई ॥२२३॥
नर वर सकल अलंकृता सब चहुँ दिस धावहिं।
श्री कृष्ण विवाह कौ संभ्रम सब करम करावहिं ॥२२४॥
नर रथ असु गज पूरिता धूप दीपावलि राजै।
कनक कलस इंद्र ध्वजा विसाल हरिपुर विराजै ॥२२५
श्री कृष्ण रुकमिनी हर्नी कथा सब देस देस गावहिं।
राजा राजा कन्या सुनि विसमै पावहिं ॥२२६॥
लछिमी रुकमिनि रानि नारायन श्री कृष्ण उदारा।
देषि द्वारिका लोक सकल आनंद बिसतारा ॥२२७॥
सकल लोक को पिता श्रीकृष्ण रुकमिनि हे माता।
लीला नाम सुनि स्वयंवरा कथा विष्याता ॥२२८॥

इहि प्रकार लछिमी उदार हरि संग अंत रहई।
हरि सहाय करै सकल लोक की आपदा सब हरई ॥२२६॥
इह जो कहै सुनै नरा नारायण भावै।
विमल ग्यान वैराग जोग वंछत फल पावै ॥२३०॥
लछिमी नारायण व्याह कथा जो वचन उचारै।
सोस पुत्र धनिक भगत मात पित कुल उधारै ॥२३१॥
जस बिन वचन न अरथ अरथ बिन वचन न होई।
अस सुमिलत सो लछिमी नारायन बोलै सब कोई ॥२३२॥
लछिमी नारायण भिन को करि है विसेषा।
धुज जव अंकुस कुलिस जस कर पद रेषा ॥२३३॥
सोइ ए लछिमी नारायण नीलाचल करहिं भोग विलासा।
श्री जगंनाथ कौ दासनिदास गावै माधव दासा ॥२३४॥

॥ इति श्री स्वयंवर लीला संपूर्णम् ॥

※ अथ श्री रघुनाथलीला लिख्यते ※

जै जै श्री जगंनाथ रघुनाथ उदारा।
तारक ब्रह्म श्री राम नाम तिहुँ लोक पियारा ॥१॥
राम नाम कल्यान धाम सब सुष को निधाना।
धर्म महा द्रुम मूल राम नाम पद निरवाना ॥२॥
मोह अंधेर कौं दीप राम तिहुं लोक पियारा।
पाप प्रचंड पाषंड ब्रिथ कौं राम नाम कुठारा ॥३॥
कल्प वृछि श्री राम नाम राम विपति विरामा।
ताप त्रय कौ छत्र राम त्रिभुवन अभिरामा ॥४॥

जनम जरा मरनादि व्याधि कों औषध निज रामा ।
काम धेनु श्री राम नाम पूरन सब कामा ॥५॥
राम नाम महिमा अनंत को करै बषाना ।
राम नाम रस स्वाद सदा संकर भल जाना ॥६॥
सुंदर स्याम अनूप रूप कछु कही न जाई ।
अंग अंग की कांति देषि कोटि काम लजाई ॥७॥
मेघ स्याम अभिराम सदा कुंचित घन केसा ।
कुंडल मंडित गंड जुगल लंबित अस देसा ॥८॥
उच्च ललाट विसाल नैन उन्नत सुभ नासा ।
सुंदर सुमुष सदा प्रसन्न सोभित मृदु हासा ॥९॥
छवि स्थल दल पीत विपुल हारावलि लंबी ।
कंबु कंठ आजानु बाहु कटि तट पीन नितंबी ॥१०॥
उदर वलित सुपीन जानु जंघा अघ हारी ।
चरन कमल नख चंद्र किरन विधु सिंधु वरकारी ॥११॥
स्निग्ध वरन प्रताप वंत तन कांति तरंगा ।
रूप अनूपम राम सुभग सोभित सब अंगा ॥१२॥
सर्व भूप हित रामचंद्र शरनागत वंधू ।
दीन दयाल सदा प्रसंन करुना के सिंधू ॥१३॥
धर्म धुरंधर छिमावंत जित क्रोध बिकारा ।
काम क्रोध लोभ मद वर्जिता श्रुति स्मृति पुकारा ॥१४॥
वेद वेदांग धनुर्वेद पारंगत होई ।
विद्या विनै विवेक वंत अस और न कोई ॥१५॥
सत्य संध मृदु दांत सांत प्रजा पालन दच्छा ।
चार वरन चतुराश्रम सब धर्म की रच्छा ॥१६॥
सकल कल्यान बहु गुनाकर वर कार्मुक धारी ।
नृप दसरथ गृह पारब्रह्म लीला भए चारी ॥१७॥

एक एक के प्रान समान करत परस्पर प्रीती।
तिन मह गुरू आराधिये सब की यह रीती ॥१८॥
नगर अजोध्या हाट बाट विहरत रघुराई।
देषि देषि नर नारि रूप मानों नौ निधि पाई ॥१६॥
इहि प्रकार रघुनाथ नाम गुण रूप कों निधाना।
अवर कछुक कह्यौ सुनहु करम संछेप पुराना ॥२०॥
विश्वामित्र महा मुनी दसरथ गृह जाई।
जग्य करण नहि पाइ दैत्य दानव अधिकाई ॥२१॥
देत्य असुर दूरि करौ राम दशरथ सुत कुमारा।
जग्य में चलौ राम जग्य संपूरण होय हमारा ॥२२॥
राम सुमित्रा पुत्र संग लै चल्यौ लिवाई।
भूमि सहि कुशासना जे बनार बनाई ॥२३॥
सादर अरघ पाद्य देई पूजा फल पाई।
धन्य धन्य राजा तुम बड़े जग्य रच्छा करो ताई ॥२४॥
मारग जात महामुनी आचमन कराई।
बला अति बला बहु प्रकार विद्या जु सिषाई ॥२५॥
आश्रम निकट विकट सरूप ताडका नसाई।
सस्त्र समूह दिये मुनी मन प्रीत बढाई ॥२६॥
सिद्धाश्रम प्रवेस कियो राम लछमन दोउ भाई।
जग्य आरंभ कियो मुनी निरभै पद पाई ॥२७॥
सप्त दिवस सप्त रात राम रच्छा सावधाना।
एकासन रघुवीर धरि धनुष सर संधाना ॥२८॥
एक बाण मारीच मारि मूर्छित करि राषा।
सिंधु तीर सर घात परयौ मानों द्रुम बिन साषा ॥२६॥
करि संघार सुबाहु सकल रजनी चर जीते।
जै जैकार करें सुर नर मुनि गन मन प्रीते ॥३०॥

राम मना आनंद भयौ रिषि कारज साधी।
आग्या मागत विनै करत अंजुलि कर बांधी ॥३१॥
प्रीत वंत मुनि जन समेत संग चल्यौ लिवाई।
जनक जग्य कौतक इक देष्यो दोउ भाई ॥३२॥

चले राम मुनि जन समेत मिथलापुर जाता।
स्राप अहिल्या तुरंत तारि सत्यानंद की माता ॥३३॥
जनक सभा सत अष्ट मल्ल धनुक कष्ट करि आना।
राम पानि कार्मुक लियौ लीला धरि ताना ॥३४॥

अरध ऊर्ध मधि भंग कियौ ईष दंड समाना।
सब्द परि पूरित दसौ दिशा सीता मन माना ॥३५॥
पुष माल ले जानकी रघुवीर उपर मेली।
कल्प वृछ के निकट मानो फूली नागर वेली ॥३६॥

जनक नृपति तब तुरंत अयोध्या दूत पठाये।
नृप दसरथ परिवार सहित निज नगर बुलाये ॥३७॥
राम लछिमन भरत सत्रुहन की पूजा कीनी।
सीता मालती उरमिला श्रुति कीरति दीनी ॥३८॥

करि विवाह नृप दसरथ चले आतुर अजोध्या।
हई हय वंस दावानला मिल्यौ मारग मध्या ॥३९॥
परस राम को गर्व षरव करि दिव्य गति करि मारी।
धनुष समर्पि पर दछिना दै चल्यौ ब्रह्मचारी ॥४०॥

नगर अजोध्या घर घर आनंद बधाई।
सीताराम स्वयंवरा सुनि सुनि सुष पाई ॥४१॥
भरत सत्रुघन दोऊ भ्राता मातुल कुल जाई।
राम लछमन अति मिले नृप प्रीत कराई ॥४२॥
इहि प्रकार वरष एक गयो भल करत बिचारा।
देवौ राम राज अभिषेक श्रुति स्मृति उचारा ॥४३॥

वसिष्ठ प्रोहित बूझिकें सुभ दिवस धरावा।
सुनि कुकई बिचार मन महिं दुष पावा ॥४४॥
देषि केकई प्रिया रानी राजा सन पावा।
द्वौ वर दत्त पुरातना देह सत्य मुष वाचा ॥४१॥
पूरब देवासुर संग्राम करि तुम गृह आये।
सस्त्र घात संताप सरीर बिथा बहु पाये ॥४२॥
घाव प्रछालि प्रछालि तबै तूल तेल लगाई।
मैं तुम्हारी सेवा करी मन प्रीत बढाई ॥४७॥
तब तुम प्रभू प्रसन्न भये मोहि द्वै वर दीन्हा।
जब इछा तब मांगि हों मैं अस कहि लीन्हा ॥४८॥
सत्य सत्य राजा कह्यौ रिनियां हु तुम्हारी।
जो इछा सो मांगि लेहु तुम हौ प्रान पियारी ॥४६॥
कहै केकई दिस विदिस चंद सूरज मुनि साषी।
द्वै वर राजा मांगि हौं दै सत्य सुभाषी ॥५०॥
वर्ष चतुर्दस रामचंद्र बन देहु पठाई।
भरत राज अभिषेक करहु आनों बेगि बुलाई ॥५१॥
ए वज्र समान वचन सुनि राजा मुरछाई।
समाचार सुनि रामचंद्र आये दोउ भाई ॥५२॥
कहै दसरथ सुनौ राम केकई छल कीन्हा।
हम कों सत्य सपत कराय तुम कों वन दीन्हा ॥५३॥
तुम वन गवन मत करहु मेरे हित काजा।
मोहि निग्रह करि अवध मध्य तुम होहु राजा ॥५४॥
कहै राम इह न होय सूरज वंस विसेषा।
बोलि वचन नहिं मेटिये पाषान की रेषा ॥५५॥
तुमकों मिथ्या बुलाय कें में राज न बैठों।
तुम्हारौ बचन सत्य करन वन जल अगनि महि पैठों ॥५६॥

पुत्र पिता को दुष धारि संकट तें तारै।
तात जननी की आग्या करै श्रुति स्मृति विचारै ॥५७॥
कहै दसरथ पुत्र विजै होह धरम जस बिसतारा।
कीरत लाभ निर विघन सिद्ध कारज होहु तुम्हारा ॥५८॥
दसरथ केरे बचन सुनत तबै कौशल्या रानी।
रिषि धन वौषधी बांधि राम रछा दछिन पानी ॥५९॥
जल बराह थल वावना मारग मधु हारी।
वन गिरि दुर्गम श्री नृसिंह रचा करहु तुम्हारी ॥६०॥
अर्ध ऊर्ध दिस विदिस तुमहि केशव रषवारा।
भूत प्रेत डर डाकिनी हरै हरि नाम उचारा ॥६१॥
कहै सुमित्रा सुनहु पुत्र लछमन सुकुमारा।
राम की सेवा कीजियो उभै वंस कुल कोटि उधारा ॥६२॥
दसरथ राम को जानि यह जानकी मोहि जानी।
राम की संगति वन बसति अजोध्यापुरी करि मानी ॥६३॥
बहुरि कौशल्या कहै सुनहु राम ए बचन हमारा।
सीता लछमन बन बसत होई हो रषवारा ॥६४॥
कहैं राम सुनहु देवी चिंता कछु नाहीं।
सीता हमार तन छाया लछमन दछिन बांहीं ॥६५॥
तुम प्रसाद कुसल पाय वसि हैं वन मध्या।
सीता लछमन सहित बहुरि आइ हों अजोध्या ॥६६॥
राम लाभ अरु हानि जानि मुष की श्री सोभा।
धरत चीर परि हरत नाहि विषै की लोभा ॥६७॥
धर्म परायण सत्यपाल पिता बचन जु जोगा।
परि दछिना दै करि प्रणाम तजि चले जु भोगा ॥६८॥
राम चलत लछमन चले सीता संग लागी।
तीनों जन निहचें चले गुर जन पांय लागी ॥६९॥

हा हा कार पुकार नगर सोचै नर नारी।
षग मृग हय गज वछ वृषभ रहे ग्रास विसारी ॥७०॥
औरै जन पद प्रजा संग छांड़ै नहि कोई।
चार कोस परजंत गए सूरज अस्त तब होई ॥७१॥

तमसा तीर रहे प्रभु संध्या सुभकारी।
करि विश्राम श्री रामचंद्र इक बुधि बिचारी ॥७२॥
अर्ध रात उत्तर दिसा कछु इक रथ चलावा।
फिरे राम अस जानि लोक सोक तजि ग्रह आवा ॥७३॥

गंगा तीर तुरत रथ राषि आये रघुराई।
शृङ्गमेर पुर गुह समेत संवाद कराई ॥७४॥
प्रात काल रथ परिहरि सारथी समझाई।
गंगा पार भये प्रभू मुनि वेष कराई ॥७५॥

आगे करि लछमन कुमार मधि जनक कुमारी।
दहुँ की रच्छा करत चले राम कार्मुक धारी ॥७६॥
मारग जात सरोवरा देष्यो अभिरामा।
स्नान पान भोजन कियो वट तर विश्रामा ॥७७॥

कोमल ललित पवित्र पात लछमण निज हाथा।
सज्या रचित विचित्र तहां पौढ़े रघुनाथा ॥७८॥
नहिं अति निकट न दूर राम तें लछमन रहाई।
वन प्रवेस को प्रथम दिवस राम कछु वारता कहाई ॥७९॥

प्रात प्रयाग गये प्रभू आश्रम भारद्वाजा।
स्वागत अरघ पाद्य दै करी राम की पूजा ॥८०॥
करि प्रणाम राम चले जमुना जल स्नाना।
प्रथम कुटी आत्रीवान सब सुष अभिरामा ॥८१॥
मुनि उपदेस प्रवेस राम चित्रकूट विधाना।
पर्ण कुटी करि रम्य मानहुँ सुष सुरग समाना ॥८२॥

पिछली कथा कहों कछू सुनिये सावधाना।
सोक व्याकुल जिहि प्रकार नृप तजे जु प्राना ॥८३॥
चल्यौ सुमित यहां ते परै छूंछौ रथ लै जाई।
जहां जहां जाय तहां तहां निंदा बहु पाई ॥८४॥

धूरी धूसर पुर प्रवेस दसरथ ग्रह जाई।
सूत सूत कहि कहां राम सब बूझत धाई ॥८५॥
नृप दसरथ जब बूझियौ कहौ राम कहानी।
भोजन सैन विश्राम गमन संदेस की बानी ॥८६॥

कहै सूत सुनौ सावधान नृप राम की बाता।
सीता सहित श्री रामचंद्र संग लछमन भ्राता ॥८७॥
गंगा तीर जु रथ रह्यौ अंघ्रि तर जाई।
हम लछमन तरु पत्र आनि सज्या जुडसाई ॥८८॥

चरन प्रछालि राम सुमित्रा तनै लछमन बिनीता।
तहां विश्रामें रामचंद संग सती जु सीता ॥८९॥
गंगा केरौ पानी आनि लछमन तब दीन्हा।
सीता सहित श्री रामचंद गंगोदक लीन्हा ॥९०॥

सैंन करी श्री रामचंद लछमन चांपै पांई।
मैं जागरन गुह समेत कथा कहत दोउ भाई ॥९१॥
प्रात काल बट दुग्ध आनि त्रय जटा जु कीन्हा।
पायन चले रथ परिहर विदा मोहि जु दीन्हा ॥९२॥

तुम कों पुनि पुनि करि प्रनाम दछिन मुष भयउ।
घोरन छांडी धाह प्रभू मोहिं परिहरि गयउ ॥९३॥
षग नग मृग गज जल जीव जंतु रोवै नर नारी।
वन प्रवेस देषि रामचंद तापस तन धारी ॥९४॥
मैं निरास ह्वै आयो राम आग्याकारी।
नगर अजोध्या लोग सवै मोंहिं दैहैं गारी ॥९५॥

जो नर राम को त्याग करै ताको सुष नहिं देषिये ।
गऊ ब्राह्मण लात मारि ताकों सम करि लेषिये ॥९६॥
ए सब कथा बिचार बिचार नृप मोहिं सुधि कराई ।
ज्यों सु कुलीन बिद्वान विप्र मद पी पछिताई ॥९७॥
इहि प्रकार नृप सोच कियो राम राम पुकारा ।
अरध राति तन त्याग कियौ सोवत नर सारा ॥९८॥
तेल द्रोन में राषि सरीर तब भरत बुलाये ।
विधिवत करि परलोक कृत्य भली विध दान दिवाये ॥९९॥
गुरु जननी सभा सहित भरत राज सुहावा ।
ए सबहिन के बचन सुनी भरत मूर्छा गति आवा ॥१००॥
राम बहौरन चले भरत संग सब लोग लिवाई ।
चित्रकूट प्रवेस कियो मुनि वृंद सहाई ॥१०१॥
अनेक जतन करि करि रहे राम राज न लीन्हों ।
कुस पादुका निवास राज भरत कों दीन्हों ॥१०२॥
आये भरत उहां तें अवधपुरी नंदगांव निवासा ।
कुस पादुका कों छत्र दै राम आगमन की आसा ॥१०३॥
चित्रकूट तजि चले राम अत्रि आश्रम आई ।
अनुसूया सीता संवाद अंगराग तहां पाई ॥१०४॥
मारग जात निशाचर सीता भै कारी ।
अभैदान रघुनाथ तबै विराध वध कारी ॥१०५॥
मुनि श्रभंग के आश्रम राघौ तब गयऊ ।
वन बासी तापस महा आनंद तब भयऊ ॥१०६॥
आये हमारे रषवार राम आजु वन माहीं ।
जप तप संयम कराय है राक्षस भै नाहीं ॥१०७॥
पुनि प्रभू श्री रामचंद्र सुतीछन के आश्रम जाई ।
स्वागत अरघ पाद्य दै पूजा भल पाई ॥१०८॥

कहै सुतीक्षण सुनहु राम इक वचन हमारौ ।
बहुत दिवस एकंत बास नहीं उचित तुम्हारौ । १०६॥
मुनि के वचन सुनि चले राम नाना आश्रम गयऊ ।
चरन कँवल परसि परसि पावन वन भयऊ ॥१०॥

कहीं एक रात पांच रहे कहीं रहें दिन चारी ।
कहीं मास पाष विचरत भये राघौ व्रत धारी ॥११॥
वरष एकादस फिरत फिरत दंडक रघुराई ।
ता पीछें आनंद तें अगस्ति आश्रम आई ॥१२॥

इंद्र धनुष तहां पाइयौ पूरन अषै तूनीरा ।
षडग कवच आयुध वर धारे रघुवीरा ॥१३॥
मुनि के वचन सुनि पंचवटी बास कियो रघुराई ।
राम प्रलोभन कारनैं सुर्पनषा आई ॥१४॥

श्रवन नासिका छिन करी क्रंदति तब जाई ।
देषि दुषित खरदूषण त्रिसरा तीन्यौं भाई ॥१५॥
चौदह सहस्र निशाचरा अकेले रघुराई ।
छिन एक में संवार कियो मुनि अभै कराई ॥१६॥

बिश्रवन नासिका करि गुहार रावन पै जाई ।
सकल कथा सुनि क्रोध भयो रावण अन्याई ॥१७॥
तुरंत रथ साजि चल्यो चोर तुरंत मारीच समीपा ।
कहै मारीच सुनि रावण पतंग जिनी परहि प्रदीपा ॥१८॥

सुनि रावण राघव प्रचंड पावक सें तूला ।
सीता हरन दसानना ह्वै है निरमूला ॥१९॥
न सुनै वचन जु रावण मारन कों धायो ।
माया मृग मारीच भयो राम के आश्रम आयो ॥२०॥
देषि विचित्र कनक मृग सीता जु लुभानी ।
रामचंद सों कही जाय सु ललित मृदु वानी ॥२१॥

अहो आरज पुत्र अचरज इक देषहु किन आई।
सौंन कौ यह सार रूप मृग की लुन्याई ॥२२॥
इह मृग रतन बिसाल छाल कोमल जो पाऊं।
तुम समीप आसन करों सज्या जु डसाऊं ॥२३॥
कहि लछमन निहचै करि यह मृग न होई।
माया मृग मारीच महा राछस है सोई ॥२४॥
तब बोले श्री रामचंद सुनि लछमन भाई।
जो भावै सो होहु आज मारों यह जाई ॥२५॥
तुम जिन चलहु यहां ते तब लगि मैं आऊं।
सीता रछा तुमहि लागि पुनि पुनि समझाऊं ॥२६॥
इहि कहि राम जु धाइयौ मृग चल्यौ पलाई।
छिन निकट छिन दूरि छिन ही छिन देत दिषाइ ॥२७॥
दूर जात मृग मारियौ प्रान जात पुकारा।
हा लछमन लागौ गुहारि राम सर संचारा ॥२८॥
न चलै लछमन वहां ते सुनि राछस की बानी।
जाहु जाहु किन लछमन सीता जु रिसानी ॥२९॥
कहै लछमन सुनहु देवी राम कों जीतें नहिं कोई।
राछस जछ सुर असुर राम सनमुष को होई ॥३०॥
सीता कहै तू बंधु रूप सत्रु है संग लागा।
भरत पठाय दियो तुमें तू मोहि वन महि लागा ॥३१॥
मैं गोदावरी नदी बूडि मरि हों अगनि जल विष षाई।
राम बिना कौन पुरुष मोकों लैहै पाई ॥३२॥
लछमन कहै यह जाति दोष अचरज कछु नाहीं।
कलह मूल अस्त्री सुभाव भ्राता भेद कराहीं ॥३३॥
मैं सतवादी निरपराधी मोकों दोष लगाई।
या कौ फल तुम पाइ हौ अवहि वन मांझ रहाई ॥३४॥

सीता निठुर वचन सुनि लछमन चले रिसाई।
तिहि औसर आयो रावन जती वेष कराई॥१३५॥
वेद की धुनि मुनि जानि सीता आदर कीन्हों।
उन पूछ्यौ कुल आपनों सीता ऊतर दीन्हों॥३६॥

में जनक सुता दसरथ बधू सुत राम पियारी।
तुम कोंन कहां ते आये तापस तन धारी॥३७॥
निमष एक करहु विश्राम अकेले होह कि दूजा।
तुमहिं देषि राम लछिन करि है भल पूजा॥३८॥

में ब्रह्मा कौ प्रनाती नाम रावन राक्षस को राजा।
तो कों हरि लै जाय हों लंकापुर भ्राजा॥३९॥
वरष एक लगि राषि हों पुनि वैहों तोहीं।
बहुरि राम नहिं पावहीं अस जानि भजि मोहीं॥४०॥

सीता कहै सुनि रावना निहचै मेरे बोला।
राम चरन नहिं छांडि हों हेमांचल डोला॥४१॥
राम महा सिंघ विक्रमा तू स्वान शृकाला।
तू त्रन तूत राम सूर पावक बड ज्वाला॥४२॥

सीता वचन सुनि रावन तब उठ्यौ रिसाई।
ता अवसर सीता हरी अंक मृत बैठाई॥४३॥
हा लछमन हा रामचंद आवहु किन धाई।
हे वन पर्वत कहियौ जब आवहि रघुराई॥४४॥

हे गोदावरी नदी तुम्हारे पांय लागों।
हे षग नग मृग जीव जिते तुम पै यह मागों॥४५॥
हे हे वनास्पती कहियौ राम रावण हरि लीन्हीं।
ए सब वचन विलाप सुनत पंछी धुन कीन्हीं॥४६॥
मारग जात जटायु गृद्ध वृद्ध बहु जुद्ध जु कीन्हा।
धनुष भुज पताका तोरि विरथी जन कीन्हा॥४७॥

षडग प्रहार पंछी पड्यौ रावण छितताई।
सीता लै लंका प्रवेस सुर गन सुषदाई ॥४८॥
ब्रह्मा प्रेरित इंद्र आइ राछसी सुवाई।
षीर षबाय सुक्र गयौ सीता समझाई ॥४९॥

ता पीछें राम लछमन आये दोउ जन संवादा।
सीता वियोग श्री रामचंद सोक करै विषादा ॥५०॥
षोजत षोजत जब जटायु भेंटे दोउ भाई।
जनक सुता रावण हरी वारता तहां पाई ॥५१॥

करि जटायु पर लोक कृत विचरत रघुनाथा।
दछिन दिस षोजत चले राम लछमन दोउ साथा ॥५२॥
जोजन बाहु कबंध मारि तहां सदगति दीन्ही।
दिव्य रूप करि चढ़ि बिवान बारता तहँ कीन्हीं ॥५३॥

गये मातंग के आश्रमा राघो धनुधारी।
सेवा करि हरि सुरग गई सबरी धरम चारी ॥५४॥
पंपा तीर जहां हनुमान भेंटे दोउ भाई।
अगनि साषि सुग्रीव दै राम मैत्री कराई ॥५५॥

आनि दिये अभरन चीर देषहु दोउ भाई।
आकास जात सीता तबै दीये जु षिसाई ॥५६॥
देषि रुदन करि बूझिहीं रावन को निवासा।
कहै सुग्रीव निहचै करहु मेरे वचन विस्वासा ॥५७॥

स्वर्ग मृत्य पाताल जहां कहुँ सीता जाई।
आनि देय हों तहां तें सत माहिं रावरी दुहाई ॥५८॥
राम कहें हूं बालि मारि तोहि करिहों राजा।
कहै सुग्रीव संदेह मोहि यहै दुस्तर काजा ॥५९॥
बालि महा बल दुंदभी मारयौ इहि ठांई।
पर्वत सदस सरीर रूप ताहि धों लेहु उठाई ॥६०॥

राम बान पद अंगुष्ठ ठेलि सत जोजन जाई।
सप्त ताड इक बान वेधि राम परतीत कराई ॥६१॥
गयो किषकिधा गरजि भले अहवान कराई।
आयो धाय सबद सुनि महावली बालि रिसाई ॥६२॥

एक बान प्रान हत बालि के सत संधाना।
राज पाय सुग्रीव सकल वनचर तहां आना ॥६३॥
कोटि कोटि एक एक दिस कों दिये पठाई।
अंगद आदि हनूमान दछिन दिस कों जाई ॥६४॥

मास दिवस षोजत फिरे वारता नहिं पाई।
प्रान त्याग बानर करत संपति बुझाई ॥६५॥
वन चर ग्रसन कों संपाति लै चंच चलाई।
ता पीछे अंगद कुंवार इक कथा चलाई ॥६६॥

कहां दसरथ कहां अयोध्या पुरी कहां राम वनह जटाऊ।
कहां मृग मारीच कहां सीता हरन जु भयऊ ॥६७॥
कहां पंछी जटायु मरन कहां बालि निपाता।
कहां हमारे तन त्याग करन कों भई भरत की माता ॥६८॥

सीता हरन भाई मरन सुन्यौ जब भाषा।
चोंच संकोच संपाति जनमी तब पांषा ॥६९॥
भई परचै प्रतीति परस्परा कीनों संवादा।
कहै संपाति सुनहु रे वीर जिन करहु विषादा ॥७०॥

इह सत जोजन है समुद्र ता पर है लंका।
तहां रावन कौ निज निवास दुर्गम गढ बंका ॥७१॥
तहां असोक वन में बसै सीता है वैसी।
जूथ रहित मृगी अकेलि मानों व्याघ्र पुर बसी ॥७२॥
करहु गवन भवन रावन के जानत हौ उनमाना।
सिद्ध कारज भयो तुम्हार सुनि वचन प्रवाना ॥७३॥

ए संपाति के वचन सुनत बंदर बर बीरा।
अंगद आदि हनूमान गये सागर के तीरा॥७४॥
तब हनुमान जु कियो बेग सागर तरि जाता।
करि विवाद सुरसा समेत तोगी नागन की माता॥७५॥
मधि सुनाभ सों प्रीति करि छाया गहि मारी।
सत जोजन तरि पार भयो सीता हित कारी॥७६॥
लंका ग्रह ग्रह षोजि षोजि बारता नहिं पाई।
असोक वन में देषी कपी सीता तब जाई॥७७॥
विकट विरूप निसाचरी घेरि रही चहुँ पासा।
मानो व्याघ्र गन में बंधी सुरभी छोड़ै स्वासा॥७८॥
कनक कांति तन तेज मलीन अंबर लपटानी।
धूम व्याकुल अगनि सिषा मानों मुरझानी॥७९॥
मानों ग्रह पीडित रोहनी निरानंद मलीना।
व्रत उपवास क्रम तन मन रहे अति लीना॥८०॥
मानों निदाघ निरस भई पुनि नदी सुकानी।
मानों कोमल कुसमलता दावानल कुमिलानी॥८१॥
मानों सह संस्कार विहुन भई संदेह अरुझानी।
मानों अर्थान्तर जाय परी वेदांत की बानी॥८२॥
मानों ससिकला आकास तें छिन भई महि मे मुरझानी।
मानों विघन सहित रिधि सिधि अछत नहिं जानी॥८३॥
मानों आसा दूर गई मन स्मृति भुलानी।
मानों आग्या प्रतिहत भई वेदांत की बानी॥८४॥
मानों वसिष्ठ सों कोप करि अरुंधती आई।
मानों कैलास वास तजि गौरिजा रिसाई॥८५॥
मानों सुरग विसारि सची भू मंडल आई।
मानों ब्रह्मा कों छांडि साबित्री तपहि कराई॥८६॥

ज्यों गजराज विदारिता सरसी रुह जोती।
मानों समलित करदम भयो सुढार गज मोती ।।१८७।।
मानों जल निधि भार भरी नाव निरंतर डोलै।
सोभा क्रांति तनक रूप मुष राम राम जनु बोलै ।।८८।।
मानों तन मन सकेलि राम रूप बिचारै।
वधिक देषि अति भीत कमठ निज सरीर संभारै ।।८९।।
मानों हरि उर वर मनि षिसि भूमि रज लपटानी।
मानों कोमल कुसुम लता कंटक उरझानी ।।९०।।
इहि विधि सीता देषि महा पंडित हनुमाना।
सीता शोक विनास कीन्ह सूरज वंस बषाना ।।९१।।
राम कथा पुनि पुनि कही सीता समझाई।
राम नाम कर मुद्रिका दे आसिषा पाई ।।९२।।
सीता कों आनंद दियो कपि कियो प्रनामा।
देहि देवि मोहि दान कछू राघौ जाहि जाना ।।९३।।
बेनी गुंथित चूडामणी दीनी कपि हाथा।
सीता हनूमान सों कही चित्रकूट की गाथा ।।९४।।
मणिसिला तिलक विचार हू कुससेंन विचारहु।
वायस वेंन विचारहु ब्रह्म सस्त्र सँभारहु ।।९५।।
सुनि संदेस कपि चले भंजि वन रक्षक सब मारी।
असी सहस्र राक्षस संघारि रावन भय कारी ।।९६।।
सेनाग्र सत पंच मारि मंत्री सत साता।
अषै कुमार तहां मारि यौ लंका विष्याता ।।९७।।
मेघनाद सों महाजुद्ध करि आप बंधाए।
दिव्य सस्त्र छांडत भये ब्रह्मा तें महा वर पाए ९८।।
ले गये रावण के समीप इंद्र जीत जस पाये।
तब रावण कपि बूझियौ तुम कहां तें आये ९९।।

मैं राम कौ निज दूत सुनों मेरे वचन प्रवाना।
सीता लैकें फेर देहु छांडौ असुर अभिमाना ॥२००॥
सूर कौ लछिमन इहै न होइ जो चोरी कीजे।
हांकि डाकि परवारि प्रगट आगे ह्वै लीजे ॥२०१॥
अबहि तुमहि मारि लै जाऊँ तौ उचित न होई।
श्री राम प्रतीग्या सो करी मेटै नहि कोई ॥२०२॥
तब रावण लंगूर पासि पावक जु लगाई।
तरकि तरकि हनुमान ग्रह ग्रह अगनि लगाई ॥२०३॥
जारि छार करि फोरि कोटि सागर तर जाई।
चूडामणि रघुनाथ हाथ दै राम प्रीति कराई ॥२०४॥
हनुमान आलिंगन दै सुग्रीव बडाई।
अति आदर सों सब मिले पुर कथा सुनाई ॥२०५॥
छुभित सिंधु रघुनाथ तबै बांध्यौ दृढ़ सेतू।
कपि समूह तरि पार गये बिभीषण के हेतू ॥२०६॥
सिंधु उतरि गये श्री रामचंद्र जाय छेंकी गढ लंका।
कोटि कोटि कपि कटक देषि रावण भई संका ॥२०७॥
संग्राम कौ निहचौ करि मंत्री संग बिचारी।
तिहि औसर आयौ समीप अंगद रै बारी ॥२०८॥
जा की सती चुराय कें घर में लै राषी।
सो आयौ संघार करन तोहि को लैहै राषी ॥२०९॥
फेर देहु लै चलहु चरन जो चाहत प्राना।
नहिं तौ लंका तुम समेत ह्वैहै गीध मसाना ॥२१०॥
धरहु धरहु कहां चले धाय अंगद घर बारी।
मारि फोरि रावण अवास चले चरन प्रहारी ॥२११॥
ता पीछे द्वंद जुद्ध बहुत उठे बहुतक बंधा।
इंद्र जीत अंतरिछ कियो गति वर सर बंधा ॥२१२॥

गरुड आगम विनष्ट भई मेघनाद की माया ।
सावधान करि जुद्ध राघौ षगपति समझाया ॥२१३॥
ता पीछें धूम राषिस अकंपना वज्र इष्ट राम मारी ।
रावण सेनापति प्रहस्त जूझे जब चारी ॥१४॥

तब रावण परिवार सहित राम सनमुष आवा ।
देषि राम छत्र मुकुट सिर भल मारि षिसावा ॥१५॥
एक वान हृदौ वेधि मुरछित जु कराई ।
छांडि दियौ श्री रामचंद रावण गयौ पलाई ॥१६॥

घर में जाय पछता यो निहचै तब जाना ।
विभीषण मारीच वचन ते भये प्रवाना ॥१७॥
नंदी सुर सिव सेवा करै कैलास में देष्यौ ।
बंदर मुष आकार ताहि में हँसेउ विसेष्यौ ॥१८॥

कहै नंदीसुर मेरे मुष समान महावीर औतरि है ।
कोटि कोटि वल बुधिवंत तेरो दर्प जु हरि है ॥१९॥
ते ये कपि बलवंत जुधि सब लंका में पैसे ।
ता देषे मोहि भई त्रास नंदीस्वर जैसे ॥२०॥

मुनि कन्या हुती वेद वंत तप करत कुवारी ।
नारायण स्वामी हमार इह बुद्धि बिचारी ॥११॥
में वरि आई करी जाय वह उठी रिसाई ।
अगनि प्रवेस करत भई मोहि वचन सुनाई ॥२२॥

यह तन त्याग करत हों में हों अजोनी नारी ।
बहुरि अजोनी ह्वै अवतरि हों ह्वै हो मृति तुमारी ॥२३॥
सो यह सीता भई आइ अजोनी नारी ।
जनक जग्य हल बंध तें उठी भूमि बिदारी ॥२४॥
में अन रन सों जुध कियो पुरी अजोध्या जाई ।
वृद्ध नृपति मूछिंत देषि मोहि गर्व हांसि ज आई ॥२५॥

कहै अनरन्य मेरे कुल एक पुरुष करि है अवतारा।
रावन सधन स बंधु समेत तेरो करि है संघारा ॥२६॥
सो यह सूरज वंस ध्वज रामचंद है राजा।
अन जाने जे किये पाप सोई भये अकाजा ॥२७॥
ए सब कथा विचारि विचारि रावण भै लागी।
कछुक प्रवोधित कुंभ करन उठ्यौ तब जागी ॥२८॥
षात षात बंदर चल्यो सुग्रीव धरि लीन्हा।
श्रवण नासिका दोउ काटि विकट विरूप जु कीन्हा ॥२९॥
आवत धावत देषि राम कपि अभै कराई।
अरध चंद्र सिर काटियो परयौ तहां रावन को भाई॥३०॥
ता पाछे त्रिसिरादिक देवांतक नरांत दोऊ भाई।
महा पार्श्व महोदरा अतिकाय सहाई ॥३१॥
इनकौ जब संघार भयो इंद जीत तब आये।
दिव्य सस्त्र मारि गये औषध आनि जिवाये ॥३२॥
किल किलात कपि कोटि कोटि लंका निसि जारी।
कुंभ निकुंभ मकराषि कों राघव सब मारी ॥३३॥
ता पीछे षल रावणा इक जुद्ध कराई।
सकति प्रहार लछमन परयौ मूरछा तब आई ॥३४॥
सो राषिस गंधर्व मारि वोषद गिरि ल्याये।
हनूमान लछमन जिवाय तहां धरि पुनि आये ॥३५॥
ता पीछे मेघनाद मरन लछमन निज हाथा।
पुत्र वियाकुल सोक कोप अति किय दस माथा ॥३६॥
ता पीछे राम रावण युद्ध कछु कह्यौ न जाई।
सप्त दिवस सप्त रात देषि सुर बिस्मै पाई ॥३७॥
एकोत्तर सत वार माथ काटि भूमी पारा।
न मरै रावण किहुं प्रकार राम तब कियो बिचारा ॥३८॥

वज्र वान हृद वेधि सनान सागर करि आयौ।
राम तूनीर प्रवेस कियो सब हरष करायौ ॥३९॥
रावण सगन सु वंस मारि सीता तब आनी।
सभा माहिं श्री रामचंद बोले अनुचित वानी ॥४०॥
सती सिरोमनि बचन सुनत सीता कल्यानी।
अग्नि प्रवेस विसुद्ध देह तिहुं लोक बषानी ॥४१॥
ब्रह्मा नारद जम कुवेर वरुनादिक आये।
नृप दसरथ परिवार सहित सबही गुण गाये ॥४२॥
सीता राम समागमा सुष प्रीत बढाई।
मृतक बंदर जिवाइया सुधा वृष्टि कराई ॥४३॥
जै जैकार करहि सुर पुसप वृष्टि समेता।
आज्ञा दई श्री रामचंद तजि चले निकेता ॥४४॥
पहुप नाम विवान सघन चढि चले रघुराई।
सीता स्यों जोई जोई कथा कही सोई सोई ठौर दिषाई ॥४५॥
यह लंका यह गिर सुवेल इह जहां रावण मारा।
यह सागर यह सेत बंध पातक क्षय कारा ॥४६॥
यह पंपा यह रिषि मूक गिरि कपि नगर किस्किंधा।
यह जहां नूपुर पायो इह जहां हत्यो कवंधा ॥४७॥
यह डंडक यह पंचवटी इह गोदावरी नदी सुहाई।
यह मुनि अगस्त को निवास अत्रि आश्रम यह आई ॥४८॥
यह चित्रकूट अति रमें जहां मंदाकिनी पानी।
यह देषौ तीरथ प्रयाग जहां भरद्वाज मुनि ग्यानी ॥४९॥
यह श्रृंगवेर पुर अवधि जहां रघुपति रजधानी।
प्रथम प्रवेस प्रनाम करै सीता कल्यानी ॥५०॥
सीता सुने श्री रामचंद कहें आये अवध निज ठाटा।
नंद गांव निवास जहां भरत जोवत हैं वाटा ॥५१॥

सीता लछमन श्री रामचंद गुर बंदन कीना।
कुस पादुका सीस तें आनि भरत राघो कों दीना ॥५२॥
परमानंद समागमा माता सब आई।
सीता लछमन राम भेंटि रहि कंठ लगाई ॥५३॥
विभीषन सुग्रीव दोउ अति विस्मै पावें।
प्रीत परस्पर प्रेम देषि तन पुलक करावें ॥५४॥
प्रथम भरथ की जटा मोचि सनान कराई।
ता पीछे लछमन सत्रुहन सुभ भेष धराई ॥५५॥
ता पीछें श्री राम जटा सिर मोचन कारी।
सुभ वसतर परधान वर भूषन धारी ॥५६॥
ता पीछें जानकी सनान प्रिय भगनी संगा।
कौसल्या कैकई सुमित्रा सब मरदै अंगा ॥५७॥
सुभ वस्तर परिधान करि परजंक चढाई।
बरत उतीरन रामचंद अजोध्या पुरी जाई ॥५८॥
जै जै धुनि सुनि मुनि समेत बहु बाजत बाजा।
मंगल कलस धुजा पताक ग्रह ग्रह पर छाजा ॥५९॥
पहुप योग अभिषेक श्रुति स्मृति विचारा।
सिंघासन बैठे श्री रामचंद दासरथी कुमारा ॥६०॥
जनक कुमारी वाम भाग सीता राम की रानी।
विस्वामित्र वामदेव वसिष्ठादि मुनि ग्यानी ॥६१॥
वेद ध्वनि अभिषेक करै बोलै जै जै बानी।
धौल छत्र सत्रुघन लियें सुललित मृदुवानी ॥६२॥
विभीषण सुग्रीव दोऊ कर चौंर ढरावहिं।
भट निर्तत सत सूर मागद वंदीजन पावहिं ॥६३॥
मुक्ताहार कुवेर दत्त इन्द्र कनक की माला।
पवन आय पहिराय गयो राम हृदै विसाला ॥६४॥

विप्रन कों बहु दान दै सबन की विदा जु कीन्हीं।
सूर्य तेज सम कनक माल सुग्रीव कों दीन्हीं।।२६५।।
मर्कत मनि मै कनक लसित कर कंकन काढी।
अंगद कों पहिराइ यौ अति प्रीत जु बाढी।।६६।।
मुकता हार कुबेर दत्त सीता कों दीन्हौं।
रछिम बंदर रीछ सबनि को आदर कीन्हों।।६७।।
सुभ बसतर परिधान गंध चंदन जु लगाई।
अमृत वचन प्रबोधि करि मिष्टान्न षवाई।।६८।।
सीता उर तें हार काढि हाथ करि लीन्ही।
जानराय श्री रामचंद आग्या तब दीन्ही।।६६।।
सीता के हार महा प्रसाद पाय हनुमाना।
अति प्रसन्न राघौ भये दीनों वर दाना।।७०।।
देय जु विधि बल ज्ञान जोग भोग विधाना।
जावत राम कथा चलै तावत रहौ प्राना।।७१।।
आधि व्याधि कोऊ नहीं अन मृत्य न मरहीं।
वात वृष्टि भै रहित गऊ व्याघ्र एक संग चरहीं।।७२।।
राम राज को लपैया रससत कोटि विस्तारा।
एक एक अच्छर उचार महा पातक जारा।।७३।।
जीत्यो जीत्यो तीन काल सकल काल राम विजै जो गावै।
वंस समागम विमल ग्यान मन वांछित पावै।।७४।।
दीर्घ आयु आरोग्य सदा राछस भै नाहीं।
राम नाम सुनि भूत प्रेत संताप पलाहीं।।७५।।
सोई श्री रामचंद्र लीला चल करहिं भोग विलासा।
श्री जगन्नाथ कौ दासानुदास गावै माधव दासा।।७६।।

।। इति श्री रघुनाथ लीला संपूर्णम्।।

ॐ अथ श्री नारायणलीला लिख्यते ॐ

जै जै जै श्री जगन्नाथ नारायन स्वामी।
ब्रह्म आदि कीटांत जीव :सब अंतरजामी ॥१॥
सचराचर बहिराब्रृत अभि अंतर होई।
सर्व नाम सर्वज्ञ नाम नारायन सोई ॥२॥
सर्व भूत हित कारनै नारायन नामा।
भुवन चतुर्दश उदर राषि जल में विश्रामा ॥३॥
शषनाग परजंक शयन पंकज नाभि जाता।
जहां उपजे चतुरानन सृष्टि आदि विख्याता ॥४॥
भूत भविष्यत वर्त्तमान नानाविधि अवतारा।
नारायन आदि मूल बीज जिनि ब्रह्मांड विस्तारा ॥५॥
नारायन औतार कथा सुनौ मन लाई।
करम कषाइ नसावई जिनि भक्ति कराई ॥६॥
नारायन गुण अर्थ नाम कौ करि है :विख्याना।
नारायन महिमा अनंत नारायन भल जाना ॥७॥
प्रथम द्वितीय तृतीय चतुर्थ इहां कछु अनुक्रम नाही।
जहां जहां जो प्रस्ताव हरि अवतरे तहां तहां हो ॥८॥
क्षिति उधार विचार हीं ब्रह्मा अवगाहा।
दक्षिण नासापुट प्रगटित आदि बाराहा ॥९॥
प्रथम अंगुष्ट मात्र तनु पुनि सैल समाना।
घुर घुर धुनि मुनि सुनत ही ब्रह्मा मनमाना ॥१०॥
यज्ञ वराह वेद मयि करमकांड सरीरा।
खुराघात सूं विदारि जलधि पैठे सुगभीरा ॥११॥
जाति अनुक्रम वर वराह सूंघत सूंघत डोलैं।
जाकौं खोज निगम करैं नेति नेति कहि बोलैं ॥१२॥

देखी आइ बसुंधरा बूडत हैं पानी।
दंता रोपित तिल प्रमान करि बाहिर आनी ॥१३॥
जैसें गजमत्त महावली जलक्रीडा पैसें।
धवल दंत के अग्रभाग करदम सम दीसै ॥१४॥

इह प्रकार श्री वराह धरनी लैं आये।
पीछे लाग्यौं आदि दैत्य हरिणाक्ष जु धाये ॥१५॥
मारि असुर मेदिनी उधारि जल ऊपर राषी।
सकत्या ध्यान कियौ प्रभू सुर मुनि जय भाषी ॥१६॥

श्री वराह कथा अपार को करैं विस्तारा।
कछुक कह्यौ भवसिंधु मगन नरकौं निस्तारा ॥१७।
इहि प्रकार औतार कीनौं मधुहारी।
बहुरि सुनौ जज्ञावतार जो कियौ मुरारी ॥१८॥

मनुतनया आकूती नाम रुचि कू जु विवाही।
तहां अवतरे श्री जग्य नाम दक्षिणा भई जहांही ॥१९॥
सुरज मारि सुरगण समेत इंद्र कों कियौं अधिकारी।
स्वयंभू मनु राखियौं असुर सिंहारी ॥२०॥

इहि प्रकार जज्ञावतार कीनौ मधुहारी।
बहुरि सुनौ कपिल अवतार जो कियौ मुरारी ॥२१॥
करदम रिषि सुत कपिल नाम देवहूती जु माता।
सांख्य योग परगट कियौ त्रिभुवन विख्याता ॥२२॥

माता कौ ज्ञान भक्ति दैं आपु सागर में गए हु।
लोक सिखावन सिद्ध राज ध्यान स्थित भए हु ॥२३॥
साठ सहस्र सगरसुत दृष्टि भस्मकारी।
सकल लोक निस्तार हेत गंगा अवतारी ॥२४॥
इहि प्रकार कपिलमुनि अवतार कीनौ मधुहारी।
बहौरि सुनौ दत्तात्रे अवतार जो कियौ मुरारी ॥२५॥

अत्रि ऋषि पुत्र भए दत्तात्रे नामा।
अनुसूया के गर्भ रतन पूरण सब कामा ॥२६॥
जा के चरन कमल की सेवा करत जदुपति भये राजा।
उभय लोक की सिद्धि भई तेज भोग विराजा ॥२७॥

इहि प्रकार सिद्धि दत्तात्रे अवतार कीनौं मधुहारी।
बहौरि सुनौ दत्तात्रे अवतार नैष्टिक ब्रह्मचारी ॥२८॥
ब्रह्मा सन तप करत सुत भये मुरारी।
सनक सनंदन सनतकुमार सनातन भए चारी ॥२९॥

पूरण निष्ठा आतमतत्व कौं कियौ बिचारा।
ब्रह्मचरज अखंडिता व्रत धरयौ अवतारा ॥३०॥
पांच वरस के सिसु समान तन नहीं विकारी।
सनकादिक अवतार सुनौ मनसा भए चारी ॥३१॥

इहि प्रकार सनकादिक बाल ब्रह्मचारी।
बौहौरि सुनौ नारायण अवतार जो कियौ मुरारी ॥३२॥
माता मूर्ति पिता धर्म अवतार मुरारी।
नर नारायन ऋषि भये सत्य महाव्रत धारी ॥३३॥

स्थान बद्रिका आश्रम तप करत मुरारी।
वरष सहस्र उपवास फल एक अहारी ॥३४॥
देखि इंद्र संकित भयौ स्थान भंग की आसा।
बसंत काम अपछरा प्रेरी प्रभु पासा ॥३५॥

बहुत प्रकार विकार हेतु करि करि जब हारी।
काम सघन संकित भयौ क्रोध मत्त दृष्टि जारी ॥३६॥
जब बोले श्री जगन्नाथ हृदै भौनहिं कीजै।
आश्रम हमारौ सुफल करौ पूजा कछु नीजै ॥३७॥
कामादिक कर जोरि कहै प्रभु यहां कछु अचिरज माही।
जे तुम्हारी सेवा करै तिनकुं काम क्रोध भय नाहीं ॥३८॥

कामी तौ समुद्र तरै क्रोधी गोपद बूडै ।
बहुत काल आश्रम पाइ जप तप सब छूटे ॥३६॥
जे तपसी हैं काम वस तेज भोग करावही ।
जे तपसी हैं क्रोध वस तिनकों कछु नाहीं ॥४०॥

जे कोउ क्रोध अगिनि प्रजारि काम तृण सम जारैं ।
क्रोध जरत है तन मँझार ताहि को ऊन उचारै ॥४१॥
जप तप नासक क्रोध तहां तुम निकट न जाई ।
तृण समान तहां कामदेव प्रभु तुम्हैं डराई ॥४२॥

कामादिक के वचन सुनत हरि प्रीति कराई ।
श्री सहस्र प्रचारिका अपनैं अंग दिखाई ॥४३॥
दई एक उरवसी नाम सुरग भूष नारी ।
श्री नारायण की कथा सुनत इंद्र भयौ आनंदकारी ॥४४॥

इहिं प्रकार अवतार जबै नारायण कीनौं ।
बहुरि सुनौं अवतार एक ध्रू कौं वर दीनौं ॥४५॥
राजा एक उतानपाद जाकैं द्वै रानी ।
जेठी रानी ध्रू की जननी ताकी किरति बखानी ॥४६॥

दूसरी सुरुचि सुहागिनि सो उत्तम कुमारा ।
लघुरानी राजाप्रिय यहि आदि व्यौहारा ॥४७॥
ध्रुव अरु उत्तमकुमार खेलें दोउ भाई ।
सुरुचि तनय लहौरौ कुंवर राजा नैं लियो उठाई ॥४८॥

लघुरानि ध्रुव सो कहै गरभ वचन सुनाई ।
हँसि हँसि के निंदा करे तिरस्कार कराई ॥४९॥
इहि राजासन सो बैठि हैं जाकी हौं माता ।
गरभ सु मेरौं धरयौ सो हैं बड विख्याता ॥५०॥
जदपि हो तुम राजपुत्र बड सबद बुलाई ।
तउ दुरभगा गरभ कैसे होति बडाई ॥५१॥

नाम सात्रदुज पूजियै कैंकट देश गनैं न कोई।
भलो सुबीज कुखेत बोइ निरफल जस होई ॥५२॥
ऐसों हो तुम राजबीज दुरभगा महतारी।
महा उच्चपद आस के नाहिन अधिकारी ॥५३॥

वचन बान ध्रुवकैं लगे रुदन करत गये जहां निजु माता।
वदत सुनिति सुरुचि की भई जो जो बाता ॥५४॥
सुनहु पुत्र जिन करहु क्रोध दोष काह नहिं दिजैं।
यह अपनौ अपराध मानि अपने सिर लिजैं ॥५५॥

सकल सुभग सौभागि सीव हरि भक्ति न कीनी।
तातै भयो अभाग्य विपति आपनो कौं दीनी ॥५६॥
राज आसन इंद्रासन ब्रह्म आसन वैसौ।
श्री वासुदेव की भक्ति करौ निर्भै पद देखौ ॥५७॥

ताकी सेवा करहु पुत्र सेवक प्रिय सोइ।
दाता परम उदार विश्व कौ ठाकुर सोई ॥५८॥
पुरुखा तीन तुम्हार तिनहिं हरि सेवा कीनी।
मनवांछित फल पाइ दया ठकुराइसि दीनी ॥५९॥

हरिप्रसाद तै तब पिता पृथ्विपति भएउ।
इहि प्रसाद ते पिता महा मनु अती बड भए उ ॥६०॥
हरिप्रसाद तब प्रपीतामह ब्रह्म वेद गरभ जु गए उ।
हरि प्रसाद सिव सुर सुरी सोम उच्चपद गए उ ॥६१॥

ताहि बिना नहि आन कोइ तेरे दुखहि छुडावैं।
जा के चरण कमल की आस कमला मुनि ध्यावैं ॥६२॥
जा लक्ष्मी के अवलोकन कुं सब तप करही।
सो लछिमी सब छाडि कैं हरि पद अनुसर ही ॥६३॥
ए जननी के वचन सुनि ध्रुव मधुवन तप कीनौ।
नारद कौ उपदेस पाइ हरि रूप मन दीनौ ॥६४॥

तब अवतरे श्री नारायन खगपति चढि आये।
अति प्रसन्न ध्रुव को भये मुख संख लगाये ॥६५॥
द्वादशभान समान देखि ध्रूव बोले बानी।
में अस्थान कामना करी तापस अभिमानी ॥६६॥

देखे तुम्हारे चरण कमल दुर्लभ मुनि ज्ञानि।
छुद्र कूप जल आस भयौ सुर सरीत पानी ॥६७॥
काच कौ मनिया सोध तैं चिंतामनि पाई।
भयौ कृतारथ रूप देखि कामना बहु क्यों न जाई ॥६८॥

तुम्हरे निकट जू आइ कैं कामना कराही।
कलप वृछ की छांह बैठि नींब रस खाइ ॥६९॥
हरि बोले स्थान लेहु वछ जिनि करतु विषादा।
हरि सेवा करि कछु न भयौ मैंटौ जग अपवादा ॥७०॥

तिहि लोक चूडामणि ध्रुवपद ध्रुव पायौ।
अध उरध अद्यापि जाकौ जस सुरन मुनि गायौ ॥७१॥
इहि प्रकार अवतार कियौ ध्रुव चरित उदारा।
बहुरि सुनौं जा कारनैं भयो पृथु अवतारा ॥७२॥

हरि निंदा करि पतित वेण तारि पुत्र पद पायौ।
बाहु मथत पृथु प्रगट भयौ आदिराज कहायौ ॥७३॥
पृथ्वी दुहि सब वृत्ति लेखि तिनहु हित कीनी।
पुरपत्तन खेट वाट गांव नांव संज्ञा सब दीनी ॥७४॥

नाभि तनै ऋषभावतार मेरुदेवी माता।
परमहंस कौ धरम कह्यौ जिहि जगत विख्याता ॥७५॥
ताकें भये सौ पुत्र नवयोगेश्वर महा अनुरागी।
काम क्रोध तें रहित भये पूरन बड भागी ॥७६॥
नौं कू नौं खंड दीये असी ऋषि धर्म सुनाये।
एक कू ब्रह्मचर्य दी दुतीए ग्रह धर्म चलाये ॥७७॥

जनक विदेह कू देइ ज्ञान भक्ति निज धम सुनायौ ।
राज भोग सूं थकित भयो पद माहि समायौ ॥७८॥
इहि विधि जड अवधूत चरित्र कियो ऋषभ अवतारा।
विद्यापति अवतार सुनौ सब कौ उपगारा ॥७६॥

ब्रह्मा के मुख मधि प्रगट हयग्रीव अवतारा ।
कनक कांति तनु तेज पाय असुर मारि किये निगम उधारा ॥८०
अश्वबदन गुन सदन बचन करि श्वास विस्तारा ।
बहुरि सुनौ जा कारनें भयो मच्छ अवतारा ॥८१॥

जानि युगांत समय पाय हरि सफरी भए उ ।
सत्यव्रत राजा तरपन करत अंजुरी में गए उ ॥८२॥
देखि दया भई राजरु पानी में मेल्यौं ।
राखि राखि सरनागता सफरी यों बोल्यौं ॥८३॥

तब जु कमंडल महि राखि यो बाढ्यौ तीनि हाथा ।
बिपुल सथल देहु नृपति सुनि अब मेरी गाथा ॥८४॥
तबहि कमंडल में धरयौ तहां हु न समाइ ।
ताल पोखरी सरोवर तहां तहां अधिकाइ ॥८५॥

सत योजन बाढ्यौ सरीर महा मच्छ उदारा ।
सत्यव्रत राजा सों हरि बचन उच्चारा ॥८६॥
आजु ही तें सपतम द्यौस मैं प्रलै होइ राइ ।
पृथिवी होइ हैं नाव रूप बीज सब लेहु चढाई ॥८७॥

मुनिन सहित राजा बढ्यौ मछ श्रृंग लै बांधि ।
शेष नागर जु रूप भयौ सब की सिद्धि साधी ॥८८॥
फिरत वारि युग सहस्र चारि महामच्छ प्रबाना ।
प्रलय समायित जानि कै ब्रह्मा निसि अवसाना ॥८६॥
इहिं प्रकार मछ अवतार कीनों मधुहारी ।
बहुरि सुनों कूरम अवतार जो कियौ मुरारी ॥६०॥

खीर समुद्र मंदराचल बूडत निरधारा ।
पृष्ठि उपरि गिरि रखि यों भयो कूरम अवतारा ॥९०॥
देव असुर आकर्षण घर्षण होई ।
कंडू कछ कें पिठि भागं निद्रा सुख सोई ॥९१॥

अमृत मथन के कारनैं हरि कीयो कूरम अवतारा ।
वहौरि सुनो नरसिंह रूप पातक क्षयकारा ॥९२॥
आदि असुर भयो हिरण्यकश्यप हरि सों वैर कराई ।
होइ बराह जिनि मारि यो मेरो निजु भाई ॥९३॥

चल्यौ तपस्या करन कौं दैत्यदानव कौं आज्ञा दीनी ।
वेद यज्ञ ब्राह्मण गौंन कौं पीडा कीनी ।९४॥
एक दिव्य सत वरष गये विन अन्न पानी ।
नाक कान कृस जानि यौं निज देह सुखानी ।९५॥

मज्जा मेंद तुचा मांस रुधिर सब कीटन खायौ ।
प्राण सैंन करी रह्यौ जाई अस्थि में लुकायौ ॥९६॥
देखि तपस्या तीन लोक व्याकुल सब भएउ ।
तब ब्रह्मा वर दैंन कौं दैत्य के आश्रम गएउ ॥९७॥

भूत भविष्यत वर्तमान ऐसा तप करे न कोई ।
दिव्य वरष सहस्र अन्न विना प्राणकों धरइ ॥९८॥
मांग मांग वर वौलि यौ असुर सुनें नहीं काना ।
लैं कमंडल जल सीच्यों उठ्यौसु वज्रसमाना ॥९९॥

जों स्वामी तुष्टमान भये हौ देउ बरदाना ।
तेज ओज बल बीरज सूर नहिं मोर समाना ॥१००॥
नहि जल नहि थल नहि आकास अस्त्र शस्त्र न मरिहौं ।
सुर नर सुयक्ष राक्षस काहूं सौं नहि डरि हौं ॥१०१॥
जो तुम्हारी सृष्टिमाहि जिते तिते तिन पै नहिं मरिहौं ।
तेज ओज बल वीरज सूरन कौं पराक्रम हरि हौं ॥१०२॥

होहु होहु ब्रह्मा कह्यौ दानव घर जाई।
तीनि लोक अप सव कियौ दिन दिन अधकाइ ।।१०३
दैत्यराज कैं चारि पुत्रु महा उत्तम कुमारा।
तिन सें महामहिम प्रहलाद जा कौं जस विस्तारा ।।१०४।।
जा के गुन अद्यापि महांत जन उपासना करहीं।
ता प्रहलाद भक्त समान उपमाँ कौं धरहीं ।।५।।
अति ब्रह्मण्य सुसीलवंत गुणवंत उदारा।
सत्यब्रत जितेंद्रिय कृत पर के उपकारा ।।६।।
सरव भूत कौं सुहृद श्रेष्ठ देखि सेवकाई।
दीन देखि पुत्र तुल्य होइ ता कौं दुख हरई ।।७।।
आप समान जो देखइ ताइ आइ करि देखै।
पर संपदा देखि हरष होय गुरु इश्वर करि लेखैं ।।८।।
विद्या विनय विवेक वंत गुण-सील निधाना।
जगत शोक निस्तार हेत विगत अभिमाना ।।९।।
गुण असंख्य महिमा अपार कछु कही न जाइ।
श्री वासुदेव के जस समान ता कौं जस गाइ ।।१०।।
गरभवास में विष्णु भक्ति रस स्वाद कराइ।
सहज प्रीति लैं जनमि यौं ता कैं अधिकाई ।।११।।
बालकनि कैं संग खेल तें क्रीडा जु धारैं।
कृष्ण चरित्र विचित्र रूप मन मांझ विचारैं ।।१२।।
चलत वोलत खात पिवत सयन आसन नहिं जानैं।
श्री वासुदेव आलिंगन को मन में रुचि मानैं ।।१३।।
कवहूँक हसत कवहूँक रुदत कवहूँक गुण गावै।
कवहूँक नृत्य करैं अति ही हरि निकट बुलावै ।।१४।।
कवहूँक पुलक गात मौंनी ह्वै रहई।
परमानन्द प्रवाह में धीरा जल वहई ।।१५।।

इहि प्रकार प्रहलाद भक्त बालकान संग पढ़ई।
गुरु मुख पाठ पढ़ै सुनैं मनसा नहिं धरई ॥१६॥
एक द्यौस सब बालका प्रहलाद सों कहई।
अहो प्रहलाद तुमहि तुम हम कैसे निस्तरही ॥१७॥
तब प्रहलाद कहैं हित प्रसंग सुनो रे भाई।
मनिषा देह दुर्लभ है मिथ्या जिनि भाई ॥१८॥
सौ मैं विफल पचास वरस सोवत ही गएऊ।
बालक मुग्ध किसोर बय खेलत ही भएऊ ॥१९॥
जराग्रसत असमरथ भए कैऊ वरष असारा।
जे दिन हते साधन समरथ ते गये घर व्यौंहारा ॥२०॥
जब लगि परैं न शृंखला निज गोड तुहारैं।
तब लगि हरि सेवा करौ वहुरि छुटिहौ न पारैं ॥२१॥
ग्रह की फांसि धन की फांसि फांसि दास अरु दासी।
पुत्र दार सब फाँसि फाँसि भारजा बड फांसि ॥२२॥
ग्राम भूमि पशु मानसा फांसि हैं वहुत प्रकारा।
तातें अवहि हरि भजौ दैत्यन के कुमारा ॥२३॥
माथैं भार चढ़ाय कै उतारयौं जब चहियै।
प्रथम न धरिये वल प्रकार काहे दुख सहियैं ॥२४॥
पंक लेपन करि सकल गात धोवत जो जाई।
प्रथम न पंक लगाइयैं यह भजौ उपाई ॥२५॥
तातें छाडो असुरभाव हरिसेवा करहु।
सरव भूत हरि देव हू पीडा पर हरहु ॥२६॥
इहि प्रकार हरि प्रीति करौ निरभै पद दाई।
हरि समरथ आराधियैं नहिं आंन उपाई ॥२७॥
जनम करम कुल जाति पांति जप तप आचारा।
हरि सेवा कौं कछु न चहियै सब कौं अधिकारा ॥२८॥

ताते यह कुमार अवस्था बड भागिन पाई।
दंड नीति पंडित जो हरि गुण गाई ॥२६॥
ए प्रहलाद के अमृत वचन सुनैं जब काना।
धन्य धन्य करैं सब बालका सुधरैं कृष्ण कौ धन्या ॥३०॥

एक द्यौस सब बालिका प्रहलादसों कहे हैं।
कहो प्रहलाद संग खेलत हम तुम ज्ञान कहां से पाये ॥३१॥
तब बोले प्रहलाद भकत एक द्यौस असुरराज सैल पधारे।
जब बोले सुरपति आय मुलमान पर पट्टन मारे ॥३२॥

काया कू ले चल्यो ब्रह्मा पुत्र छुडाई।
जब हि अवसर मोहि बदरिका आश्रम जाय ॥३३॥
माता के गर्भ में मुनि नारद कथा सुनाई।
तब तें मेरे हृदय में हरि भकित बीज आई ॥३४॥

एक समय दैत्यराज प्रहलाद बुलाये।
पढौ पुत्र एक साधु वचन जातैं सुख पाए ॥३५॥
कहै प्रहलाद यह साधु वचन नृप सुनौं सावधाना।
घर तजि वन खंड जाइयै भजियै भगवाना ॥३६॥

हरि हरिनाम उचारियैं हरि जस सुनियैं काना।
हरि कौं सीस नवाइयै हरि रूप कौं ध्याना ॥३७॥
हाथन हरि के करम करि पावन परिक्रमा दीजैं।
नैंन निरखि श्रीजगन्नाथ आतमा समरपन करि लीजैं ॥३८॥

कोटि ग्रंथ को यही अर्थ श्रुति स्मृति पुकारा।
श्री वासुदेव की भक्ति विना नाहैं नर को निस्तारा ॥३६॥
ए प्रहलाद के वचन सुनत नृप उठ्यौ रिसाई।
मारौ दुष्ट ब्राह्मण तिन यह बुद्धि सिखाई ॥४०॥
विप्र कहै सुन महाराज बृथा दोष न दीजैं।
या को यहै सुभाव जो भावैं सो कीजैं ॥४१॥

तब बोल्यौ हरणाक्ष पुत्र तोहि किन बुद्धि सिखाई।
अंजुलि जोरि प्रहलाद कहैं सुन दैत्यन के राई ॥१४२॥
जगत गुरू श्री जगन्नाथ पंडित विख्याता।
तिन मोहि पाठ पढाया सौ हैं वड बिख्याता ॥४३॥
सो सव कें हिरदैं वसैं सो सब करम करावैं।
सोई सुर सो बासुदेव सो अंतरयामि नाम कहावैं ॥४४॥
ता हरि कों जाने बिना जनम मरणादि सतावैं।
ता की सरन जौ जाइ गरभ सौ वहुरि न आवैं ॥४५॥
ए प्रहलाद के वचन सुनत असुर उठयौ रिसाई।
मारण कौं आज्ञा दई सब दैत्य बुलाई ॥४६॥
सौ जोजन सिखर तैं प्रहलाद खिसाए।
तहां राम रक्षा करी आपुन चलि आये ॥४७॥
वसुधा सो आज्ञा करी तुम ऐसैं कीजै।
भक्त मेरौं प्रहलाद आगे होइ लीजैं ॥४८॥
दुग्ध फेन वसुधा भई अति पौंहौंप सुगंधा।
तहां खेल हरि भक्त प्रहलाद करत आनंदा ॥४६॥
तिहि अवसर असुर कोपि खबर मगाई।
जीवत जौं होई दुष्ट पुत्र मारौ वेगि जाई ॥४०॥
सरप सस्त्र अगिनिदग्ध कृति या विहि उवारी।
अभिपातन संशोणादि निरफल सव है भारी ॥५१॥
नागपास अरु सिंधुमधि गिरि उपर दीना।
न मरे जब काहु प्रकार खडग तव आपुन लीना ॥५२॥
अव निहचैं तोहि मारि हौं आज्ञा भंग कारी।
कहो कहाँ विष्णु तोर अव लेहि उवारी ॥५३॥
तब वोले प्रहलाद भगत अति मधुरी वानी।
तो मैं मो में खडग खंभ में हैं चक्रपानी ॥५४॥

व्यापक विष्णु सब माँहि विष्नु सब बाहिर होइ।
देखियै सुनियै कहियै विष्नु विन औ र न कोई ॥१५५॥
यह सुनि असुर जु धायौ कियौ खंभ परहारा।
भयो भयानक सिंह नाद दानव क्षयकारा ॥५६॥
भगत वचन सत्य कारनैं हरि कियौ खंभ अवतारा।
अरध नराकृत अरध सिंह अदभूत आकारा ॥५७॥
बाहु दंड पर चंड तेज नख वज्र की ज्वाला।
भृकुटि विकट आरक्त नैंन मुख विषम कराला ॥५८॥
घर के द्वार हरि जंघ पर दानव पारा।
दंत कटक टान नख चट चटात अति उदर विदारा ॥५९॥
असुर मारि संकट हि टारि निज जन लै राखा।
पाइ परयौं प्रहलाद भगत जैसें सुर भाखा ॥६०॥
कहैं नृसिंह प्रहलाद वछ वर लेहु विचारी।
कहैं प्रहलाद भगत देवाधि देव एक विनती हमारी ॥६१॥
जे तुह्मारी सेवा करैं तुम पैं कछु चाहैं।
सो सेवक नहि बोलियैं बानि जारो कहावैं ॥६२॥
ते सेवक नहि बोलियैं सेवक तैं स्वामी कहावैं।
सो स्वामी नहि बोलियैं धन दैं सेवा करावैं ॥६३॥
मैं तुम्हारो सेवक अकाम तुम सुभाव के स्वामी।
राज काज सौं नहीं काम सुनि अंतर जामी ॥६४॥
प्रहलाद कहैं वर सोइ देउ उपजै नहि कामा।
पिता मोर निस्तारियै सब सुख अभिरामा ॥६५॥
इहि प्रकार नरसिंह रूप भगतन बर दीनों।
वोहौं रि सुनौ हरि अवतार गज मोचन कीनौं ॥६६॥
क्षीर समुद्र त्रिकूट नाम गिरिवर परधाना।
ता में है रतिवंत नाम वन है अभिरामा ॥६७॥

ता वन मध्य सरोवर जल अमृत समाना।
कनक कमल सौगंधित कौ करहि वखाना ।।६८।।
ता वन भीतर है गजेंद्र महा मत्त निकंपा।
गिरि गरिष्ठ वपु जब चलै पृथिवी होई कंपा ।।६९।।
व्याघ्र सिंह सार दूल जा के गंध परा ही।
वृक वहाह महिषादिक जाहि देखि पला ही ।।७०।।
घाम तप भयों गजेंद्र चल्यो जल पान की आसा।
वृक्ष वेण वहु गुल्मलता भंजित चहु पासा ।।७१।।
पैस्यौं जाई सरोवरा स्नान पान जु कीनौं।
जूथ सहित सब सुत कलित्र क्रीडा मन दीनौं ।।७२।।
तिहिं अवसर काल प्रेरित एक ग्राह जु आयौ।
ग्रस्यौं गजेंद्र कौं चारु चरन जल में धरि धायौं ।।७३।।
गज आकरषैं वाहिरा ग्राह भीतर लैं जाई।
सुंडा दंड धराइ करै वल की अधिकाई ।।७४।।
वाहिर मधि आकरषना वरष सरस्त्र युग भएऊ।
क्षीण भयो गजराज ग्राह वल अधिक जु भएऊ ।।७५।।
रुदन करैं गज जाति सकल कोऊ तारैं न पारैं।
दीन दसा देह स्तिनि मंद पुकारैं ।।७६।।
प्राण परे गज संकटा बुद्धि वल न वसाई।
तब हरि नाम पुकारि यौं पिछिली सुधि आई ।।७७।।
काल व्याल भय भीति सवन की रछ्या करई।
सरनागत कों अभय देत आपद सब हरई ।।७८।।
नारायण श्री रामकृष्ण में शरण तुम्हारी।
जगतगुरु श्री जगन्नाथ मोहि राखि मुरारी ।।७९।।
ए आरतवचन सुनि चक्रपाणि खगपति चढ़िआयौ।
अंतरीछ ते कमल तोरि गज सुंड उठायौ ।।८०।।

गरुड उतहि हरि धाइ यौं वहु वेग जु बाटा।
ग्राह सहित गजराज सुंड धरि वाहिर काटा ॥८१॥
चक्र नक्र कौं बदन फारि गज मोचन कीनौ।
देखत सकल देव मुनीस अपनौं रुप जु दीनौं ॥८२॥
ग्राह भयौ गंधर्वराज श्राप मोचन भएऊ।
हरि हरि वचन उचारि विमान चढ़ि वैकुंठ गएऊ ॥८३॥
यह हरि को गज मोक्ष करम कलिमल क्षय कारा।
वहुरि सुनौ कल्याण रूप वामन अवतारा ॥८४॥
वलि भार्गव प्रसाद पाइ त्रिभुवन जब जीता।
इंद्रादिक सुरग छाडि गये दस दिस भय भीता ।८५॥
तब कश्यप उपदेस पाइ अदित व्रत कीनौं।
प्रगटये पुरुषोत्तम माता कौं वर दीनौं ॥८६॥
वलि धरमिष्ट महा वलि जीत्यों नहिं जाई।
तब कनिष्ठ पुत्र होइ कैं करौं इंद्र सहाई ॥८७॥
भाद्र द्वादसी सुक्लपक्ष मध्यदिवस मुरारी।
कस्यप घर अवतार आए वामन व्रत धारी ॥८८॥
दंड कमंडल मेखला मुंजी वंध मुरारी।
सिरसि जटा कुस हस्त कंठ अक्ष माला धारी ॥८९॥
कृष्नाजिन कोपीन वसन ·घन स्याम सरीरा।
द्वादस तिलक विराजहीं वामन महा धीरा ॥९०॥
वलि के यज्ञ सभा मध्य तप तेज विराजैं।
वेदा गम व्याख्यान करत संसौं सब भाजैं ॥९१॥
दिखि आनंदित भयौ राव आसन लैं दीना।
स्वागत अरघ पाद्य दैंइ पूजा तब कीना ॥९२॥
आजु धनि ग्रह भयौ मोर कुल को उधारा।
धनि जग्य भयौ मोर जहाँ आए चरण तुम्हारा ॥९३॥

भूमि दान गोदान वाजि गज कन्या दाना ।
सुवरन रतन ग्रह दान लेहु अथवा मिष्टाना ॥१९४॥
ब्राह्मण कहै सुन महाराज दिजैं भौमि कौं दाना ।
तीनि पैंड सू अधिक नहीं मेरे चरण प्रवाणा ॥१९५॥
वलि वोले पुर नग्र ग्राम एक दीप किन लीजैं ।
तीनि पैंड की कितीयक वात संकोच न कीजै ॥१९६॥
विप्र कहैं जो तीनि पैंड पाइ संतोष न करई ।
सपत दीप नव खंड पाइ ताकों पेंड न भरइ ॥१९७॥
जेन तेन संतोष विप्र तप तेज अधिकाई ।
असंतोषी द्विज नष्ट होइ तप तेज नसाई ॥१९८॥
तातै लहिहौं तीनि पैंड नहि अधिक सौं काजा ।
जदपि हौ तुम महाराज धरमिष्टक वड राजा ॥१९९॥
शुक्र कहै वलि कान लागि वह विप्र न होई ।
देव काज साधक बिष्नु वामन हैं सोई ॥२००॥
वलि वोले कोउ होइ ताहि तौं पीठि न दीजैं ।
वोलि वचन ब्राह्मण कौं मिथ्या क्यौ कीजै ॥२०१॥
जोग जग्य जप तप व्रत कीजैं तिहि लागी ।
ता कौ हाथ उठाइ कैं को क देहि अभागी ॥२०२॥
यह कहि चरण प्रक्षालि यौ वलि धरि दोउ हाथा ।
वामन पावन पाहोईका लै धरयै निजु माथा ॥२०३॥
साधु साधु सब कोऊ कहैं जब कर जल लीनौं ।
तब वामन वाढ्यो सरीर विराट रूप जु कीनौ ॥२०४॥
एक पैंड पंचास कोटि मेदिनी मापि जु लीनौ ।
उपर अंडकटाह भेदि दूसर पद कीनी ॥२०५॥
तीसर पद कौं नहीं ठौर तब हरि वोले वानी ।
हाथ उठाइकैं नहि दे मिथ्या अभिमानी ॥२०६॥

वलि बोले देवाधि देव मिथ्या नहि कीजैं।
तीहर पद कौं यहि ठौर मेरे मस्तक दीजैं ॥२०७॥
वामन कहै पंचास कोटि मेरे चरण प्रमाना।
अहुथ तेरौ सरीर कैसे होइ समाना ॥२०८॥
वलि बोले पंचास कोटि तें अधिक यह देही।
धरा धाम धन पुत्र दार ममता कौं सनेही ॥२०९॥
तब वामन वलि वांधि दीयौ निज दान जु नौं।
देखत सुर नर मुनि सवैं हाहा कार जु कीनौ ॥१०॥
तब बोले प्रहलाद भगत प्रभु भली जु कीनी।
तुम्हारी दइ संपदा तुम ही हरि लीनी ॥११॥
तब बोले चतुराननां भल कहैं न कोई।
सरधा सहित जो दान देत बाँधै नहिं कोइ ॥१२॥
तब बोली विंभ्रा वली दाता नहि कोई।
तुम्हारौ रचित ब्रह्मांड सकल तुम्हारौइ होइ ॥१३॥
तब बोले श्री जगन्नाथ वलि वंधन छोरि।
साधु साधु वलि महा भाग जिनि जीति माया मेरी ॥१४॥
सुरगहू तें अधिक भोग भुगतौं पुनि कारी।
मैं तुम्हार रखवार सदा द्वार रहि हौं गदाधारी ॥१५॥
वलि पैं लैं कैं दान अपन पौं वलि कौ दीनो।
इंद्र आनंदित सुरग पाइ सव कौं हित किनों ॥१६॥
इहि प्रकार वामन अवतार पृथ्वी पर वेशा।
वौहौरि सुनौं हंसावतार नारद उपदेशा ॥१७॥
मन्वंतर अवतार वहौरि कीने मधुहारी।
साधु अनुग्रह दुष्ट दंड कीरति विस्तारी ॥१८॥
धन्वंतर अवतार नाम सुमिरत रोग भाजैं।
परशुराम अवतार सुनौं जाकी कीरति गाजैं ॥१९॥

रिषि जमदग्नि सु पिता नाम रेणुका माता।
तहां अवतरे श्री परशुराम संग विग्नु जु भ्राता ॥२०॥
एक दिवस रेणुका गई नदी लेन पानी।
क्रीडा करत गंधर्व देखि तहा दृष्टि भुलानी ॥२१॥

विसरि गई घर व्यौंहार पाछैं फिरि आई।
देखि कोप जमदग्नि पुत्र को कहे जु बुलाई ॥२२॥
सुनौ पुत्र निज वचन आजु मारौ निजु माता।
कोउ न करैं ऋषि वचन कह्यौ यह भली न बाता ॥२३॥

तिहिं औसर आये परशुराम ऋषि आज्ञा दीनी।
माता भ्राता सबन मारि ऋषि आज्ञा कीनी ॥२४॥
प्रसन्न होइ ऋषि वर दियौ राग मागि जिवाई।
उठि बैठे जनु सोवते वध बुधि विसराई ॥२५॥

एक दिवस नृप सहस्त्र बाहु अरजुन वन गए ऊ।
सेना सहित अतिथ कियौ मन विसमैं भए ऊ ॥२६॥
कामधेनु हरि ले गयौ राम वेग जु लीना।
नगर प्रवेस करत नृप राम हाँक जु दीना ॥२७॥

उलटि फिरयौ नृप सहस्त्रबाहु युद्ध जु दीनौ।
छोहिणी सहस्त्र दस परशुराम संहार जु कीनौं ॥२८॥
नृपहि हनि कामधेनु आनि ऋषि कौं लै दीनी।
सकल तीरथ अस्नान करि शुद्ध भयौ सत्य कीनी ॥२६॥

एक समय श्री परशुराम भाइन सङ्ग वन गयेऊ।
सहस्त्रबाहु के पुत्र पापी दारुण दुख दयेऊ ॥३०॥
ऋषि जमदग्नि को सीस काटि पापी चले पलाई।
राम राम उर ताडती रेणुका उठि धाई। ३१॥
माता भ्राता कौ सुमिरि कहैं मृत तात शरीरा।
महि खावती पुरी प्रवेस भारगव बलवीरा ॥३२॥

मारि मारि रिपु रुधिर सरोवर कीनौं साता ।
रामकुंड तरपन कियौ कुरु खेत विख्याता ॥२३३॥
राम राम उर ताडि रेणुका सपत वार पुकारी ।
माता कौं श्रृण तृगुण करि छत्री सब मारी ॥३४॥
तात जिवाइ जग्य करि भूमि विप्रन कौं दीनी ।
इहि प्रकार परसुराम अवतार नित्य कीनी ॥३५॥
वौहोंरि सुनौ दासरथी राम रघुकुल अवतारा ।
जा कौं जस विस्तार कोटि सत कहैं न पारा ॥३६॥
तात वंचन सुनि राज तज्यौ वनवास जु कीनौं ।
भ्रात भारिजा संग लियैं तापस ब्रत लीनौ ॥३७॥
चित्रकूट करि वास वौहोंरि दंडकवन गएउ ।
मारग जात निसाचरा विराध वध भएउ ॥३८॥
पंचबटी वन विचरत राम राक्षस बहु मारा ।
मुनि असथानेनिरभै भए लंका पुरी पुकारा ॥३९॥
तब रावण माया रचि सीता हरि लीनी ।
दसरथ सखा जटायु वारता सब दीनी ॥४०॥
हत्यौ कवंध सुग्रीव सखा करि वालि निपाता ।
खोजि खोजि कपि आइ यौं कही सीता की वाता ॥४१॥
वाँध्यौ सागर सैल सेत सेन सब पार उतारा ।
सगन संकुल लंका समेत तहाँ रावण मारा ॥४२॥
विभीषन कौं राज दियौ सीता घर आनि ।
अगनि प्रवेस विशुद्ध भई तिहूँ लोक वखानी ॥४३॥
नगर अयोध्या रामचंद्र पुन रपि भए राजा ।
जा की कीरति विसाल विशद तिहूँ लोक विराजा ॥४४॥
इहि प्रकार राम अवतार नारायन जु कीनो ।
वहुरि सुनौं कृष्नावतारा सब कौं सुख दीनों ॥४५॥

ब्रह्मादिक की सुनि गुहारि यदुकुल अवतारा।
जननी जनक श्री वासुदेव देवकी के प्राण अधारा ॥४६॥
गोकुल मथुरा द्वारिका वास कियौ मुरारी।
त्रिविध प्रकार लीला करी सब असुर संघारी ॥४७॥
वकी सकट तृनावर्त जमलार्जुन भजे।
अघ वक वछ सु धेनुका काली के सिर गंजे ॥४८॥
अनल प्रलंब दावानला पान कियौ मुरारी।
शंखचूड वृषभ केसी व्योमासुर मारी ॥४९॥
इंद्र कोप करि गिरि धरयौ व्रज बृष्टि निवारी।
रजक कुवलयापीड चाणूर मुष्टिक संहारी ॥५०॥
कंस खार सुर कालजमन मुचकुंद दृष्टि जारी।
द्वाररावती कृष्न राजा जीते परिचारी ॥५१॥
महाभारत निमित काज भूभार उतारा।
सकल लोक निस्तार हेत निज जस विस्तारा ॥५२॥
वौहौरि सुनौ व्यासावतार जमुनादीप जाता।
ऋषि पारासर पिता नाम सत्यवती माता ॥५३॥
वेद विभाग ते व्यास नाम किये दश सत भाषा।
सकल लोक निस्तार हेत महाभारत भाखा ॥५४॥
निगम गूढ कौं अरथ प्रगट करि निजि जस विस्तारा।
अष्टादश पुराण किये सब कौं उपकारा ॥५५॥
इहि प्रकार व्यासावतार कीनौ मधु हारी।
वहौरि सुनौ वुद्धावतार सर गुण सब राखी ॥५६॥
माता वुध सुधोदनी पिता जैंन होई आई।
दैत्यनि जग्य छिंडाइ कैं हिंसा धरम सुनाई ॥५७॥
वौहौरि सुनौ कलि जुग व्यौंहा चोर होहिहैं सब राजा।
भूख पियास अन्न विना मरि हैं सब परजा ॥५८॥

गगन निहारि भूमि बूंद जल न परि हैं।
देस छाडि वन पर्वता फल मूल आहार करि हैं ॥२५६॥
ब्रह्मचर्यव्रत भ्रष्ट ह्वै हैं वाणप्रस्थ ग्रामवासी।
ग्रह कुटंब हि त्याग कैं अस्थ लोभी संन्यासी ॥६०॥
वेद मंत्र पुराण विवाह जंग्य ब्राह्मण परिहरि है।
जेन केन प्रकार सो निज उदर जु भरि हैं ॥६१॥
जनक जननी सौं वाद साले सादू सों प्रीति।
वीस वरस की अवस्था पांच वरष की प्रसूति ॥६२॥
अजा समान धेनु होहि हैं तृन समान द्रुम जाती।
मेघ ओस सम होहि है सुहि लच्छन वाती ॥६३॥
छोट :सरीर वहुत अहारी होइ हैं सब नारी।
वहु अपत्य जनमाइ कैं स्वामी कौं दै हैं गारी ॥६४॥
जिहि कौं मन जाही मानि हैं स्त्री पुरुष जु होई।
उदर भराइ पासि हैं पुरुषारथ सोई ॥६५॥
सूत्र मात्र विप्र वौलियैं आश्रम भेष धारी।
बचन मात्र पंडित वोलियैं लाबनि केस धारी ॥६३॥
परदारा पर द्रव्य देखि कोई नहिं डरि हैं।
वली दुरवल हि मारि हैं वरि आई करि हैं ॥६७॥
ताल पोखरी कृषि करि करि तहां अन्ननि पावै।
राज दंड दुरिभिच्छ पीडित वहि परजा गुहरावैं ॥६८॥
अधरम उचासन वैठि हैं तप वेष धराई।
लैंहि प्रतिग्रह सवन कौं वक धर्म सुनाई ॥६९॥
जन सिद्धांत वेचि हैं वेद विक्रय ब्राह्मण करि हैं।
तन विक्रय करि कामिनि निज उदर जु भरि हैं ॥७०॥
पाप प्रचंड पाषंड सकल भू मंडल ह्वै हैं।
हरि सेवा जप तप आचार कोउ नहिं करि हैं ॥७१॥

इहि प्रकार धरम जाय अधरम होइ विस्तारा।
तब प्रगटित श्री वासुदेव निह-कलंक की आतरा ॥७२॥
संभरि ग्राम निवास विष्नु जस ब्राह्मण नामा।
ताके घर अवतार विष्नु पूरण सब कामा ॥७३॥
सेत अश्व आरोहना कर खडग जु धारी।
धर्म प्रवर्तक कार नैं सब म्लेछ संहारी ॥७४॥
पुन रपि सत्य प्रवर्त होइ धरम स्थापना।
हरि अवतार अनंत चरित को करहि वखाना ॥७५॥
सृष्टि समै तब हरि धरैं दक्ष प्रजापति अवतारा।
संस्थित मान धरम अधरम दूरि हरि रूप विस्तारा ॥७६॥
अधरमअन्त असुर सब अहिंसावृत अवतारा।
ए विभूति अवतार पृथक् तेरह परकारा ॥७७॥
हरि अनंत अवतार अनंता हरि चरित अनंता।
सर्ब प्रकार अनन्त रूप हरि है भगवन्ता ॥७८॥
सुक सनकादिक नारदादि चतुरानन गावैं।
सेष सहस्र मुख गाइ गाइ अज हु पार न पावैं ॥७९॥
ब्रह्मा नारद ध्रू प्रहलाद मनु मनु की जाया।
ताकौ पुत्र प्रिय ब्रत जिनि तरी हरि की माया ॥८०॥
प्राचीन वरहि भुव गंधर्व इक्ष्वाकु मुकुकुंदा।
एल वेदेही गाधि रघु अंबरीष सौरि रस बृंदा ॥८१॥
सगर जजाति नहुष अरु हंतदेव अलरक मानधाता।
देवब्रत अमूरतिरिव वलि दिलीप समेता ॥८२॥
सौभरि उतंग कसिप देवल पिपलादि मुनि जेता।
सराद भूरि सेन परासर उद्धव समेता ॥८३॥
विभीषण हवंनुत परिक्षत पारथ प्रमादी।
अश्वसेन बहुलाश्व विदुर माया न विषादी ॥८४॥

हून किरात सरब जे पतित शूद्र स्त्री पाप जाती।
ते पुनि माया तरे करैं हरि भगति विख्याती ॥८४॥
विष्नुचित्त जे गांव हीं ते माया तरही।
तिन कौं कहा कौं कहा सराहियैं ते श्रवण न धरहीं ॥८६॥
जा पर कृष्न कृपा करैं निजु भक्ति करावैं।
सो दुस्तर माया तरै भव पार जु पावैं ॥८७॥
यह अमृत लीला जु कोऊ हित चित में धरही।
श्री वैकुंठ निवास पाइ नहिं भव अवतर ही ॥८८॥
हरि अवतार निरंतरा जे वचन उचारै।
मानुष जनम सुफल करै हरि रुप विचारैं ॥८९॥
मेघ स्याम अभिराम सदा सुंदर मृदु हासी।
अर्द्ध चंद्र रुचिभालचारुमुखअरूण विंवाधर भासी ॥९०॥
प्रफुलित कमल लोचन विशाल भाल तिलक विराजैं।
चंदन लेपित सकल गात वन माला छाजै ॥९१॥
संख चक्र गदा हद्म मुकुट कुंडल पीतांवर धारी।
नील सिखर श्री भ्राज मान सेवक सुखकारी ॥९२॥
श्री जगन्नाथ कौं रुप देखि मन भयौ हुलासा।
समस्त वैष्नवन की आज्ञा पाइ गावैं माधौं दासा ॥९३॥
इति श्री नारायनलीला संपूरनम्

अथ परतीति परीक्षा

राधा वाधा दूरि करि साधा सिगरे काम।
आराधा श्री कृष्णजू सुमिरत आठौ जाम ॥१॥

राधा राधा कहत ही वाधा जात पलाइ।
परमारथ तैं सुख अधिक रहत नित्य हिय छाइ ॥२॥
जै जै जै श्री राधिका राधा पति गावो।
राधापति कौं सुमिर कैं यह फल पावो ॥
अदिष्ट दोष दुर्बुधि नाहि जो कवहूँ सतावै।
जब उनकी कृपा होई तब उन के दरसन पावैं ॥३॥
एक दिना नंद लाल मन में करी जु इच्छा।
लैन राधिका पै चले परतीति परिछया ॥
जो राधा मानैं नही परतीत हमारी।
सांमल सखीकौ भेस बनि गये जहां वृषभान दुलारी ॥४॥
मांग पारि वैनी गुही जनु पन्नग नारी।
नख सिख सवैं सामरि करि पहिरें झमक सारी ॥
नख सिख के अवलोक तें दंपति दुति चीन्है।
चली चली सांमल सखी चिंता चित दीन्है ॥५॥
सांमल सखी आइ तहां श्री वृषभान किसौरी।
मद गज चाल चलत महा मती कछु थोरी ॥
सामल सखी कौं देखि कैं वह आदर कीनौ।
आसन दै जल पान दै विजना कर लीनौ ॥६॥
विहसत हसत पूछन लगी कहा नाम तिहारौ।
कौन गांव तुम बसति हौ वड भाग हमारौ ॥
तुम्हारौ रूप सरुप देखि कैं मेरौ मन रह्यो लुभाइ।
एसी सखी देखी नहीं अति सोभा ठहराइ ॥७॥

सांमल हमरौ नाम है हम गोप कुमारी।
तुम हो सोभा की नदी मनो मगन महारी॥
नंद गांव की पाहुनी राधा पै आइ।
तुम ही राधा हौ भटू अति भली वडाइ॥८॥

नंद गांव कौ नाम सुनते हसि लागी ग्रीवा।
प्रीति परस्पर अति वढ़ी महा प्रेम की सीवा॥
हम ही राधा हैं सखी तुम भले सिधारी।
कौन अर्थ आगमन कीयौ सो कहौ विचारी॥९॥

राधा दरसन लालसा मेरे नेंन भुलाने।
तुम्हरौ दरसन पाइ कैं हम अति सुख माने॥
तव राधा सांमल सों कहै मन मांह विचारी।
हम तुम एक संग रहैं जिनि नेह विसारी॥१०॥

प्रीति परस्पर कीजिये नित होइ मिलावो।
कै तुम आ मन हीं कहौ कै मोहि वुलावौ॥
यही प्रीति की रीति है नित होइ सनेहा।
कृपा करौ सांमल सखी ज्यों घन वरसै मेहा॥११

अपने मन की तुम कहौ हमारी सुनि सुनि वाता।
यातें अति सै मन वढैं अति प्रीति विख्याता॥
तेरी सी उन हार है भरतार हमारौ।
तातें तेरौ जीव सखी लागत है प्यारौ॥१२॥

इक गामें इक नाचइ इक जंत्र वजामें।
सब सखीयन में तुम भली सोभा छबि पामें॥
चंद्रभगा चंद्रावली ललिता सुख पाइ।
राधा ललिता सौं कहैं सखी सोभा मन भाइ॥१३॥
तब बोली सांमल सखी तुम सब गावो गौरी।
होत अवेर घर दूरि है हे वृषभान किसोरी॥

यह सुनि सर सम लगी सखी विह्वल है आई।
राधा ललिता देखि कैं अखियां मुर झाइ ॥१४॥
तब वोली सांमल सखी जिन छोह करोरी।
भोर ही उठि आइ हों जि निज य डरौरी॥
जो लगतु मनि हि आइ हौ हूँ कैसें जी सूं।
आवन कहै न आइ है तोहि भैया की सू ॥१५॥
तब सांमल सब सों मिलि चली लोचन भरिलीने।
राधा ललिता सव सखी किये वंदन मलीने॥
चली सखी हेरैं सबै जहां लग दरसन पायो।
राधा अति व्याकुल भई भरि भरि स्वास छुडायो ॥१६॥
भोर हीं उठि सांमल सखी वह फेरि हूँ आई।
वैठी श्री राधा जहां सव सुख दाई॥
सांमल सखी कौं देखि कैं हसी राधा मन मांही।
कंठ सौं कंठ लगाइ कैं मिलि भेंटि करि छथाई ॥१७॥
क्यों मेरी सांमल सखी तेरो वदन विहाली।
काहे तैं तू उनमनी कहि मेरी आली॥
कै आवत तोहि श्रम भयो कर चरन दवाऊं।
कै तोहि लपट लागी होइ घसि चंदन लाऊं ॥१८॥
हे सांमल तेरी ननदी खिजी कै सास रिसानी।
कै तेरे पिय परमेश्वर नैं कही न मानी॥
कै काहू नें दुख दियो ताहि पकर मगाऊं।
सुन मेरी सांमल सखी जो कहै सो लाऊं ॥१९॥
अरी ना काहू दुख दियो ना देह दुखारी।
एक अंदे सौ मो भट्ट सुनि मेरी आली॥
हूं गृह मारग चली जाति मोहि लखी अकेली।
वनमाली ने मो तकि कांकरी गहि मेली ॥२०॥

मंद मंद मुसिकाइ कैं मन हि कलोल्यो ।
जो हूं उनमनी हो रही तो मुख हू न बोल्यो ॥
एकन की चीठी लिखे एकन की बांचै ।
एकन संग गावहिं एकन संग नाचै ॥२१॥

एकन संग लाग्यो फिरे एकन पनघट आवै ।
एकनि की गागरि भरे एकनि आप उचावै ॥
एकन सौं रस रास में हसै अरु हसावै ।
एकन की रस रीत में गहि पाइ मनावै ॥२२॥

वह नायक भयो डोलइ घर घर फिरि आवै ।
तोसी तरुनी छाडिकैं वहु मान न पावै ।
तू रूहवती गुनवती अरू पायन पूजी ॥
तुम कीरति कुल मंडला पुनि और न दूजी ॥२३॥

एसे ढीठ लंगर सौं करि रहौ अबोलौ ।
हा हा खाय मो पायन परै तौ घरी एक न बोलौ ॥
क्यों मेरी सांमल सखी बावरी सी भाषै ।
निंदा करत गुपाल की मन में अभिलाखै ॥२४॥

जो चाहत है हित कियो ऐसें जिनि भाषै ।
तोहि सांमल सखी एसी अभिलाखै ॥
मरे सहज कटाछ के माखन गिरिधारी ।
औरन के नेंनन बसैं पाषा नमहारी ॥२५॥

और रूपवती गुनवती सरूप नागरी ।
हमरे पिया के मन मोरन वसै आगरी ॥
मेरौ मन तन रुप गुन उन हिरदै धारयो ।
मो सम औरों नाहिनें यह मन हि सम्हारयो ॥२६॥
सांमल कहै हे राधा तुम सती सुमति सयानी ।
एसी बातें करत हौ जनु करत अयानी ॥

गाय चरावत वन फिरैं ग्वालन संग जाइ ।
ता की कहा परतीति है तुम करत वडाइ ॥२७॥
कह्यौ हमारौ मानीये हिरदै धरि लीजै ।
एसे ग्वाल गमार की परतीत न कीजै ॥

दही माखन के कारनें घर घर ढूढ़त डोलै ।
क्यो तेरै मेरी सखी मन मोह्यौ सौलै ॥२८॥
अरी अगम अति गुन गोपाल के कहा कोक वखानौ ।
वेद तपस्या करत जज्ञ दानादिक दीनौ ॥
एक पाय ठाढ़े रहैं करि ऊधर वांही ।
सखी हमारौ सौ पिया उन हूँ कैं नाही ॥२६॥
अमर पुरी कौ राज राज सिंहासन राजै ।
धर्मराज जमराज जाकी सोभा नहीं साजै ॥

तासों इंदर कहत हैं जो सृष्टि पलाहीं ।
सखी हमारौ सौ पिया उन हूं कैं नाहीं ॥३०॥
वृषभ चढ़े कर सूल गर रुंडन की माला ।
अरधंगी साथ लैंहिं पीवैं गरल विसाला ॥

नागफनी को मुकुट गल वाघंवर माही ।
सखी हमारौ सौ पिया उन हूं कैं नाही ॥३१॥
हे सखी अगम अति गुन गोपाल के कहा वखानौ ।
प्राकृत कीनौ है सखी तौ कहं कहां नौं ॥

प्रथम पछारी पूतना दीरघे अति भारी ।
दो तरवर तोरे सखी वलवीर विहारी ॥३२॥
एक सकटासुर मारि यो तृणाव्रत मारा ।
वछासुर मारि बकासुर चौंच विदारा ॥
अरिष्टा सुर मारि सव तीरथ में न्हायो ।
ताही सौं मेरी सखो मेरो कुंड कहायो ॥३३॥

तहां सुख केलि निज धाम रत्न मंडप राजैं।
आठ दिसा आठौ सखी तिनकी कुंज विराजैं॥
तहां वहु द्रुम लता पुष्पवल्ली अति साजैं।
वीना मृदंग वांसुरी दुंदुभी किंकिनि वाजैं।३४॥

अगम अति रूप गोपाल के कैसैं जु वखानौं।
सुंदर वाकी सोभा तौसौं कहूं कहां लौं॥
कोटि तेज रवि चंद लौं मुख ऊपर राजैं।
केहरि कटि छवि निरखि कैं मानो गयंद लाजै॥३५॥

त्रिभुवन में कौ रूप है त्रिभुवन को सोभा।
उपमा कौ उपमा सखी मन कौ मन लोभा॥
अरुन वरन कोमल चरन नख चंद्र उज्यारा।
विवाधर आजानवाहु श्रुति कुंडल सारा॥३६॥

सुनि मेरी सांमल सखी तेरी वुधि बढ़ाऊं।
जो तू सुनै सुहाग की तौ कहि समझाऊं॥
हम वन सोभा कौं जाहिं जब संग सिधारैं।
आगें आगें वे चलत मग कंटक झारैं॥३७॥

मो समेत हरि हे सखी वन वेन वजामें।
पाछें ते आपन हसैं पहिलैं मोहि हसामैं॥
मोहि जंभाइ लेत ही चुटकी चुटकामें।
मोहि तृसा लागै जबै अधरा मृत प्यामैं।३८॥

अपने मन में जानि लेहु हे सांमल आली।
एक प्रान दो देह हैं राधा वनमाली॥
एक प्रान द्वै देह हैं तौ ह्यांहीं हरि आमें।
तौ तुम कुं सांमल सखी माथो नामैं॥३९॥
इतनौ वचन सुनि राधिका लोचन पट झांपे।
गदगद वानी भइ पुलकित तन कांपे॥

हम तुम दौउ एक हैं तौ वेगे आवौ ।
हमें तुमें कछू भेद है तौ तुम जिनि धावौ ॥४०॥
तब हीं विहसे सांमरे तिय रुप विसारयो ।
मुकुट ल कुट मुरली लई पीतांवर धरयो ॥

मकराकृत कुंडल वनमाल विसाला ।
रुन भुन पायन पैंजनी नख ज्योति रसाला ॥४१॥
देखि मनोहर रुप कौं श्री राधिका वलि जाइ ।
वाल कृष्ण सुख देन कौं प्रभु रहे समाइ ॥

उठौ उठौ कंठ लगौ हम कुंज विहारी ।
तिहरे हित चलि आइ हैं वृषभान दुलारी ॥४२॥
अरी सखी कहाँ गइ कहां सखी सिधाइ ।
मेरे मन की मोहनी किनि आनि खिजाइ ॥

अहो राधिका वल्लभा भामिनी हमारी ।
तो समान कोउ नहीं एसी पन्नग नारी ॥४३॥
सुंदर सांमल गौर जोरी अद्भुत राजै ।
अधर धरै कर वांसुरी वनमाला छाजै ॥

वार वार फूल माल सब सखी पहिरामें ।
गावत नटि मुरलिका कोकिल सुर गामैं ॥४३॥
गौदोहन की वेर गिरवर घर आये ।
जुरे सवरे ग्वाल वहु आनन्द वधाऐ ॥
वाल कृष्ण के प्रभु कृष्ण मन पूजी आसा ।
भक्ति अपनी दीजिये गावत माधौ दासा ॥४४॥

इति श्री परतीत परिछया संपूर्ण ॥

श्री गोपालजी सहाय ॥

अथ ग्वालिनी झगरो

बरसांनै की भाम काम कुंजन अभिमांनी।
बसत गोपकी बांह नगर कीरति हम जांनी॥
जिन में मध्य सुहागिली श्री राधा उनिकौ नाम।
मन मै मैकाकी करैं ढिग बरसांनौ गांऊ गाँम॥
दान दधि पै लगे ॥१॥
ह्वै गई भेट गुपाल लाल सुनिकर गिरि गोवर्धन की घाटि।
ताकत सब मुतियानि मांगनि हारत पाँति॥
चोरि चोरि दधि बेचियौ सदा हमारैं मारि।
नित ग्वालिन झगरौ परैं आजि लेहि निरवारि॥
दान दधि पै लगे ॥२॥
ढोठा किनि लिखिदीयौ दाँन छाप कायै करि पाई।
वन में करत अनीति नित उठि रोकौ नारि पराई॥
दान दधि पै नही ।३॥
इत नैंती भई हम मारग आवत जाति।
गोरस दान नही सुन्यौं सुकहौ कान्ह इतरात ॥४॥
दान दधि पै नही॥
गुजरी कंस के वंस चकहै तेरी छाती।
वेसरि सुरठ लागियौ सो राच्यौ परम सनेह।
माँनौ भोर गभवगि मन चाटन उतरि॥
ऐसौ दान दधि पै नही ॥५॥
गोरस दान नही सुन्यौ काहू औरै ठाँनि।
सव ग्वालिनि जव थकि रही सोचत सगरौ साथ॥
ढार ढार करि काढियैं सुपाथर तन को हाथ।
दान दधि पै नही ॥६॥

गुजरी अव देखौ दधि कुंन किरवाढि मिटि ।
दैहौ ग्वालिन दान हमारौ देहु ग्वाल सिखाय सवन की
होत है जूठ ॥७॥
विना वौंहिनी द्दैहौ ढोठा प्रात समै की नांहि ।
सकत सनैना होय ढोठा सिर पर भारी मट ॥
दान दधि पै नही ॥८॥
गुजरी मटकी धरौ उतारि बात कहा कहैरी ।
सोय गोवर्धन मथुरा वीच दुहाई मेरी ॥
गौ चरांऊं मेलिकैं सहुं नंदराय कौ पूत ।
मोपै होय पर जायगि सु उरझायौ नौ मन सूत ॥
दान दधि पै लगे ॥
ढोठा किनि लिखि दिय कुमर होत हो राते ताते ।
नंद घर सव वाढ़िय सवहि जाति अहीर ॥
चंचल आये रावरे तेरे माई बाप ॥८॥
कठिन कंस मथुरा वसै दुवकत फिरौगे आप ।
दान दधि पै नही ॥६॥
गुजरी कंसै डारौ मारि कैं सु गहि नदिनहाऊ ।
उग्रसैन कौ राज तिलक तै मथुरा आऊं ॥१०॥
कहैं कान्ह सुनि ग्वालिनि मेरे दिष्ट अ अगन के वूंट़ ।
दिना चारि में देखियौ सु किसकर वैठें ऊंट ॥
दान दधि पे नही ॥११॥
कव के वावा नन्द जी कव की माता जसोदा रानि ।
अधर नदि उजांड़ियौ सुछांडयौ मथुरा देस ॥
दान दधि पै नही ॥१२॥
जव ग्रहै लालनैं दगरौ ठान्य बात कहि दो प्रेम की ।
वात कही मन मानियौ व्रज में राज सदा करौ ॥
माधौ दास वलि जांऊं ॥१३॥

फुटकर पद

पद राग रामकली

मै तिहारी शरणागत सुनौ नीलगिरिनाथ ।
माया नृत्य करैं नटी मद्द ति मम माथ ॥
मै अकेल जन दुर्व्वला वैरी वलवंत ।
रच्छा कर हु करुणामय भगवंत अनंत ॥
काम क्रोध मद मत्सरा अभिमान सहाय ।
अनेक एक कहुं पीडवैं दुःख सह्यौ न जाय ॥
वाहरि साधु सवै कहैं अंतष्करण विकार ।
कठिन व्याधि कलि केशवा कासौं करौं पुकार ॥
गृह वन नरक स्वर्ग में मोहि तिहारी यै आस ।
श्री जगन्नाथा जनि परिहरौ कहै माधव दास ॥१॥

कैसैं धौं प्रीति करत हरि हम सन हम ममता के बांधे ।
हरि हैं परम सुजान सुनिर्मल हम जटिल कुटिल मति साधे ॥
हम महा मोह अज्ञान तिमिर वश हर्ष शोक मंद भागे ।
मिटत नहीं दुर्गंध दुराशा ऐई दाग होइ लागे ॥
वेद पुराण सुनत दिन दिन प्रतितऊ न उपजसि ज्ञाना ।
चारि मास जल वर्षै शिला परि तऊ न उपजसि धाना ॥
जा कौ ध्यान धरत शिव मुनि जन परिहरि विषै विकारा ।
हम सुत दार कलत्र वंधु जन मोह फास न विसारा ॥
जैसौ अनुराग लाग लोक कैं संग ऐसौ हो हरि संग लागौ
माधवदास आश जग छूटै जरा मरण भय भागै ॥२॥

फुटकर पद

पद राग रामकली

मै तिहारी शरणागत सुनौ नीलगिरिनाथ।
माया नृत्य करैं नटी मद्धंति मम माथ ॥
मै अकेल जन दुर्व्वला वैरी वलवंत।
रत्ता कर हु करुणामय भगवंत अनंत ॥
काम क्रोध मद मत्सरा अभिमान सहाय।
अनेक एक कहुं पीडवैं दुःख सह्यौ न जाय ॥
वाहरि साधु सवै कहैं अंतष्करण विकार।
कठिन व्याधि कलि केशवा कासौं करौं पुकार ॥
गृह वन नरक स्वर्ग में मोहि तिहारी यै आस।
श्री जगन्नाथा जनि परिहरौ कहै माधव दास ॥१॥

कैसैं धौं प्रीति करत हरि हम सन हम ममता के बांधे।
हरि हैं परम सुजान सुनिर्मल हम जटिल कुटिल मति साधे ॥
हम महा मोह अज्ञान तिमिर वश हर्ष शोक मंद भागे।
मिटत नहीं दुर्गंध दुराशा ऐई दाग होइ लागे ॥
वेद पुराण सुनत दिन दिन प्रतितऊ न उपजसि ज्ञाना।
चारि मास जल वर्षै शिला परि तऊ न उपजसि धाना ॥
जा कौ ध्यान धरत शिव मुनि जन परिहरि विषै विकारा।
हम सुत दार कलत्र वंधु जन मोह फास न विसारा ॥
जैसौ अनुराग लाग लोक कैं संग ऐसौ हो हरि संग लागौ
माधवदास आश जग छूटै जरा मरण भय भागै ॥२॥

कैसैं धौं परम पद जन पाइ।
लाज कुल अभिमान लीनै रहत दूजै भाइ॥
एक कहत न बनै भाई दूजौ नाहि नै आहि।
कहै जैसैं रहै तैसैं जानि कहिवौ ताहि॥
शुभ अशुभ के मोह मुग्द्रर परैं प्रपंच के माहि।
निकट ही जल तृषा व्याकुल पीबत नाहिनैं चाहि॥
कहा निर्गुण सगुण कहा कथैं जौन छूटै आस।
सवै भुस कौ लीपनौ जन कहै माधव दास॥३॥

रे नर राम रमत अलसासी।
पर अपवाद वदत रुचि मानत तजि अमृत हि विष खासी॥
सुख कारण वहु यत्न करसिरे पायसि दुःख की रासी।
श्री पति गति विपरीति न जानसि मगह मरत तजि काशी॥
जब लग नहीं तन ताप बियापत तब लग करि हरि सेवा।
जब गृह जरसि कूप खनिसी चसि उद्यम होसी न केवा॥
साधु संग तजि करसि कुसंगति बिपत्ति तरसि किहि टेकी।
महा समुद्र नाम नवका भजत्यज खर पद अविवेकी॥
नैननि निरखि नीलगिरि सुंदर श्रवणनि सुरि हरि गाथा।
माधव दास उहि भवन गमन करि श्रीजगन्नाथ नाइ माथा॥४

प्यारा प्यारा प्यारा है जगन्नाथ जगत में प्यारा है।
जगन्नाथ जगत में प्यारा है॥
सुंदर मंदिर रतन सिंहासन जगमग जोति उजिआरा है।
देश देश के जात्री आये खोलो रतन किवाडा है॥
सांवली मूरत माधुरीं मूरति वड़ी वड़ो अंखियन वारा है
लील चक्र पर ध्वजा विराजै मस्तक सोहै हीरा है॥

मधु मेवा पकवान मिठाई लदमी आप संवारा है।
माधो दास आस चरनन की चरण कमल वलिहारा है ॥५॥

माई मैनु प्यारा लगै सिरि जगन्नाथ।
उज्जल देश हेम नचल परबत वैठे भुजा पसार।
सावली मूरति माधुरी मूरति गले वैजंती माल॥
घंटा में घंटी अधिक विराजै पीताम्बर चटकार।
मधु मेवा पकवान मिठाई भौग लगै दिन रात॥
माधो दास आस चरनन की चरण कमल वलिहार ॥६॥

श्री जगन्नाथ जगत गुरु गाइयै।
जगन्नाथ बलभद्र सहोद्रा इन तजि और न जाइऐ।
इंद्र दवन अरु मारकंडे तीरथ सेत गंगा जी नहाइये॥
माल पूआ ओ मनोहर अटका महा प्रसाद जो पाइये।
माधौ दास आस चरनन की चरन कमल चित लाइये ॥७॥

उद्धव साधु समागमा पाईयै वड भाग।
हरि अनुराग पुरातना तातैं मन लाग॥
तुम हमरैं वड बंधवा निहारै यदुराय।
हरि रस कथा सुनाइ कैं हमैं मरत जिवाय॥
बिन परचैं निर आदरा नर करैं अभिमान।
मीन न जानै जल सुधा जलचर करैं मान॥
हरि गुण गावत हरि रता तैं हरि कैं पास।
जन्म जन्म सत्संग दैंहु कहै माधव दास ॥८॥

जै जै हरि पद सब सुख राशी ।
शशि शत अजित विजित नख मणि गण मुनि मन ज्ञान प्रकाशी ॥
अरि दर मीन कमल ध्वज बज्र जव अंकुश कुलिश निवासी ।
नव किशलय श्री रमाकर पल्लव ललित प्रीति सु विलासी ॥
कोटि कल्पतरु वसत अंगुरायनि काम धेनु बसै पूरी ।
नूपुर रुणित निगम निर्मतसित नित्य नमित शक्र विधि सूरी ॥
ब्रज वनिता उर उरगराज शिर पशु संग बनै विहारी ।
माधवदास सोई जगन्नाथ पद नील शिखर सुख कारी ॥९॥

आज सफल सखी जन्म हमारौ ।
देख्यौरी द्दगनि भरि नंद दुलारौ ॥
वाम कपोल वाम भुज दीयैं ।
अधर मधुर मुरली कर लीयैं ॥
नाद वेद संगीत सुनावैं ।
श्रवन चलत शिर शिखर डुलावैं ॥
नैन तरंग रंग रस पैखौ ।
अब हरि हम अपनै करि लेखौ ॥
पूजी मेरी जन्म जन्म की आसा ।
श्रीजगन्नाथ मुख देखैं माधव दासा ॥१०॥

—(:)—

(बिभास)

मन हरि हरि हरि उचरसि हरि हरति त्रिविधि तापा ।
पद्म पत्र पानी लौं स्पर्शत नही पापा ॥
महा पातक गर्ज्जंत गज तव लग तन मांही ।
जब लग हरि कृष्ण नाम सिंह की ध्वनि नाही ॥

अघ वघ कलि कृष्ण नाम नाशत हैं ऐसैं ।
भानु करणि अंधकार पावक तृण जैसैं ॥
विषय कथा बाद प्रबाद तोलौं बदन भाषै ।
श्री माधवदास जगन्नाथ जौलौं न रस चाखै ॥११॥

—०—

(धन्नासी)

निजदास दास गणना में मोहू कब करिहौ ।
अरुण कमल युगल चरण मम उर कब धरि हौ ॥
सुघटित मणि पाद पृष्ठि कर अलंकृत करि हौ ।
भवन गमन समय जानि आगै लै धरि हौं ॥
सुगंध सदन अदन कौ ताम्बूल बदन देहौं ।
डारत अवशेष समय अंजुलि करि लैहौं ॥
दुग्ध फेण सुगंध सेज पौढ़े यदु नाथा ।
चरण दावत रहिहौं कछू कहि हौं गुणगाथा ॥
आई जब सिंधु सुता नंदनन्दन पासा ।
श्री जगन्नाथ माथ नाइ चले माधव दासा ॥१२॥

(भैरव)

जागिरे नर मोह निशा त्यज । शरद प्रात यदुनाथ चरण भज ॥
सोयसी जन्म वृथा ही गमायसी । सफल होयसी जब हरि गुण गायसी
देह गेह ममता जो भूलसी । सैबरि कुसुम देखि कत फूलसी ॥
हरि नहीं भजसी विषै चित लायसी । मंत्र बिना कैसैं भुजंग खिलायसी
भक्ति मुक्ति की जो करै आसा । श्री जगन्नाथ भज माधवदासा॥१३

भज मन नंदनंदन चरण ।
विजय पंजर पोत पद भव सिंधु तारण तरण ॥
जिन भजे ते अटलन टरें मिटे जामन मरण ।
साक्षी श्रुति स्मृति पुकारै कोटि कलमल हरण ॥
सदा चारु बिचार जिनकैं पतित पावन करण ।
अधमोद्धारण दीनबंधू विरुद अशरण शरण ॥
श्री जगन्नाथ अनाथ बंधू विश्व पौषण भरण ।
दास माधव हरि भजन तैं शोध अंतःकरण ॥१४॥

—:—

(सोरठा)

सावरे ऐसी शरण तिहारी तारण तरण मुरारी ।
जहां तहां ते वहत मंद जल सुरसरी माहि समावै ॥
संगति के परताप महात्म्य नाम गंगोदक पावै ॥
जो चंदन ढिग विषम बबूल सो चंदन भयो भाई ।
पारस मणि को ताबा परसै कंचन की दरशाई ॥
स्वाति बुंद जो परै फणी मुख सो तहां विष है जाई ।
तास बुंद के भये मुक्ता फल संगति की अधिकाई ॥
माधवदास आस सब पुजईहो जाति पाति कुल हीना ।
पूर्ण संगति हरि को पाई लै जन पूरा कीना ॥१५॥

—⊙—

(राग कल्याण)

वन तैं आवित धेनु चरायैं ।
संध्या समय सावरे अंग पर गोपद रज लपटायैं ॥
विधि वाहन भक्षण रुचि माला शोभित उर पहिरायैं ।
मनौं मूल ते निकसि पुनात न आतुर कुलशि ढरायैं ॥

बर्हि मुकुट कैं निकट लसत लट मधुप वृंद सच पायैं ।
बिलसत सुधा ललित आनन पर नाहिनै उड़त उड़ायैं ।।
नहीं बड़ छोट ढोट शिशु मंडल ग्वाल बनै इक दायैं ।
वलि माधव श्री जगन्नाथ परिजन जीवत यश गायैं ।।१६।।

—०—०—

गोपीजन बल्लभ जय मुकुंद । मुख मुरली नाद आनंद कंद।।टेक।।
जय सुन्दर मन्दर धरण धीर । वृंदाबन बिहरन गोपवीर ।।
वनिता शत यूथप परम धाम । लावण्य कलेवर कोटि काम ।।
जय रास रसिक रमणीय वेश । शिर शिखि शिखंड विराजै केश
गुंजाफल धातु विचित्र देह । दर्शनि मन हरण बढावै नेह ।।
जय जय वैजंती उरसरित माल । अरुण कमल लोचन विशाल।।
कुंडल मंडित भुज दंड मूल । हरि नृत्य करत कालिंदी कूल ।।
जय खग मृग मुनि मोहै मुरारी । मधुर धुनि सुनि मुनि ध्यान टारि।।
स्वर सप्तक मूर्छन तान गान । सुनि थकित भये सुरगण विमान।।
जय जय श्रीकृष्ण कला निधान। करुणामय यदुकुल कमल भान।।
भगवंत अनंत चरित्र तोर । कहै माधवदास मन मरोर ।।१७।।

(बिलावल)

बरसाने की गोपी फगुवा मांगन आई ।
कीयो है जुहार नंदजू भीतर भवन बुलाई ।।१।।
अरघ दीयो नंदरानी अब निजु भाग हमारे ।
प्रीत मम सकल कुल वधू पाये दरस तिहारे ।।२।।
इक नाचति इक गावति इक बजावति तारी ।
काहे मोहन राइ दुरि रहे मैयाइ दिवावति गारी ।।३।।
सुनहि कुवरि मेरी राधा अबही जिनि मुख मांडो ।
जेंवत स्याम सखानि संग जिन पिचकारी छांडो ।।४।।

बरजत भरत कुवर कौं न रहे नवल किसोरी।
ऊपर अंचल दे रही दोऊ मैया दुहूं औरी ॥५॥
कहति रोहिनी जसुमति वचन हमारे कीजे।
मेबा बहुत मिठाई जो भावे सो लीजे ॥६॥
केसरि वहुत अरगजा जिनि मोहन पर डारो।
सीत लगें कोमल तन तुमहीं चित्त विचारो ॥७॥
वहुरि कहें दोऊ माता जो चाहो सो लेऊ।
जाइ भरो ब्रजराजहि मोहन मांगे देऊ ॥८॥
मोहन मागे पैयेत दिन दस हमे जु दीजे।
गोप कुवर के पलटे जो भावे सो लीजे ॥९॥
सुवल सुवाहु श्री दामा सुनत अचानक आये।
केसरि माट भरें दधि ले गोपीनि सिर नांये ॥१०॥
दूध लियो भीतर तें छिरकी सव ब्रज नारी।
तब गुपाल सखा सव हसत देदे कर तारी ॥११॥
जूथ जूथ जुवती मिलि आई सव ब्रज वाला।
गिरि गिरि परत गलिन में हार डोर मणिमाला ॥१२॥
जो रस होरी बाढ्यौ कहत कौन पें आवे।
ललिता कुवर कुवरि को गहि गहि अंचल लावे ॥१३॥
प्रभु मुकुंद ब्रज वासी अटक कौन की मानें।
कहत भैया माधो जन चलहु भरें वृषभानें ॥१४॥

—❀—

वाघांवर ओढ़े सांवरो हो।
किथें जोगी कोंहू नर कौन ॥
संख सवद सुनि जित तितें घिरि आई ब्रजनारि।
वदन विलोकि कुवरि राधे कों वैठे आसन मारि ॥१॥

कौन दिसा तें आये हो रावर कौन दिसा कौं जाइ ।
मोहन आपु मोंनी ह्वै बैठे दच्छिण दिसा बताइ ॥२॥
हसि बूझति व्रषभान नंदनी रावर उत्तर देहु ।
कारन कोन भेष तपसी को वन तजि डोलत ग्रेहु ॥३॥
चुटकी विभूति दई राधे कों चले हे बाघंवर झारि ।
मनु हरि लीयो नेकु चित वनि मे गोहन लगी हे कुवारि ॥४
नगर नगर और वगर वगर प्रति निसि दिन फिरत उदास
नैन चकोर भये राधे के हरि दरसन की प्यास ॥५॥
मनहु तोर तन जतन हरि लीनों निरखि नैंन की कोर ।
श्री जगन्नाथ जावनि धन माधो प्रीति लगी दुहुँ ओर ॥१६

मोहन खेलत हो हो होरी । हरि हलधर की जोरी ॥टेक॥
वंसीवट यमुना तट कुंजन पर ठाढ़े बन वारी ।
इत सखियन को मंडल जोर श्री वृषभान दुलारी ॥
होडा होडी भरत परस्पर देतु है आनंद गारी ।
उडत गुलाल कुंमकुंमा केसरि कर कंचन पिचकारी ॥१॥
वाजत वेणु वांसुरी किन्नर अरु महुवरि मुहू चंगा ।
आवज अधवट अंमृत कुंडलीया तातै सरस उपंगा ॥
वाजत ताल मृदंग झांझ डफ सुर के उठत तरंगा ।
नाचत गावत करत कुतुहल केसरि छिरकत अंगा ॥२॥
तव मनमोहन सखा वुलाये सबकौं मतो सुनायो ।
ओरे भईया तुम चोकत रहियो मति कौऊ जाय गहायो
जो तुम कौं वै पकरि पाइ है करि है मन को भायो ।
तातै सावधान ह्वै रहियो मै तुम कौं समझायो ॥३॥
नवल किसोरी सी राधागोरी मन में मती जु कीन्हों ।
वोलि लईइन संगी अपनी भेष जु बलि को दीन्हों ॥

ताको खेलन चले मनमोहन सखा न काहु चीन्हों।
एक जौ दौरि आइ अचानक पीछै तें गहि लीन्हौं ॥४॥

आइ सकल समिटि ब्रज वनिता मोहन पकरे तबहीं।
मागत रहि एहि बिधना पै दावजू पावै कब ही॥
जब तुम चीर हरे हमारे हा हा खाई हम सब ही।
अब तौ वसन छीन सब लैहै पाय परोगे तब ही ॥५॥

एक सखी वहै वदन उघारौ हम सब दरसन पावै।
श्री मुख कमल नयन मेरे मधुकर तन की तपन बुझावै
एक कहै तुम वैनी गूथों रुचि करि मांग सजावैं।
एक कहे तुम उनहि नचावो हम सब ताल बजावै ॥६॥

एक जो हसत दूरि भई ठाढ़ी घूंघट पट मुख ढाकैं।
एक सखी हरि को मुख निरखत तन की दसा न ताकै
एक सखी मधुरे सुर गावत मुखतें गारिन भाखैं।
गिरधर चरित अनंत को जानें वै सबहिन को मन राखै ॥७॥

एक सखी तब आइ अचानक मोर पिछ गहि लीनों।
नैक ही वात लगाय लाल कों पीताम्बर गहि छीनों॥
एकै अंखि आंजि मुख माड्यौं उपरि गुलचा दीनों।
मानत कौन फाग में प्रभुता मन मान्यौं सोई कीनौं ॥८॥

एक कहें बोलो बलि भइया वै तुम्है आनि छुडावै।
सखा एक पठवो घर अपने जसुमति कौ लै आवै॥
जानत हो छल बल करि छूटे गहे न छुटन पैहो।
करो विनती श्री राधाजू सौ वै तुम्है आनि छुडैहो ॥९॥
दूरिहितें बल आवत देखे वहु सखी उठी धाई।
छल बल कै जैसै तैसै करि उनहू कूं गहि लाई॥
कीन्हे आंनि एकठे ठाढ़े हरि हलधर दो भाई।
उनहुँ की आंखि आंजि मुख माड्यौ सी राधेजू सैन वताई ॥१०

कर जोरें हरि हलधर ठाढ़े आग्या हम कों कीजै।
जो अंछा होई तुम्हारी सोई सोई हम पै लीजै॥
हसि हसि वात कहत मनमोहन हु वौवत सुख के वीजै
छाड़ि देहु घर जांहि आपनै पोतांवर मोहे दीजै ॥११॥
देखि देखि ब्रह्मा शिव नारद मन ही मन पिछतावै।
पूरन भाग सकल ब्रज वनिता हम मुख कही न जावै॥
जा कारज हम ध्यांन धरतु है ध्यान हुँ आवत नांहै।
सो देखो बृज जुवतीन आगै जोरे ठाढ़े वांहै ॥१२॥
तब मनमोहन सखा पठायो फगुवा वहुत मंगायो।
जोई जोई वसन वन्यों तन ताके सोई सोई लै पहनायो
श्रीजगन्नाथ प्रभु तुम चिर जावो सब को भलो मनायो
वाढ्यो बंस नंद बाबा को माधोदास जस गायो ॥२०॥

जैतिश्री

आजु बधावौ ब्रजराज कैं।
अहो रानी जायो है मोहन पूत ॥
मास भादो द्योस आठें रोहनी बुधवार ।
जसोदा की कुंख जनमें कृष्ण लियो अवतार ॥१॥
बहुत नारि सुहाग सुन्दरि और गोप कुमारी ।
सजन प्रीतम नाउ लै लैं देत परस्पर गारी ॥२॥
साथि ये दिये नंद द्वारे सात सीक बनाइ ।
नव किशोरी मुदित ह्वै ह्वै लगत जसोदा जू के पाइ ३॥
बहुत मगन उमंग लीला कर रहि गोपी ग्वाल।
माट माखन दूध दधि लै छिरकत सब बृजबाल ॥४॥
करि अलंकृत गोपिका पहराइ नोतन चीर।
गाइ बछ सिंगार ल्याए ग्वालिनि की भई भीर ॥५॥

एक हेरी दैं दैं नाचे एक भेट हिले धाइ ।
एक बदत न देत कांहूं एक खिलाबत गाइ ॥६॥
एक तरुन किशोर बालक एक जोबन जोग ।
कृष्ण जनमत प्रेम सागर क्रीडत ब्रज के लोग ॥७॥
पुत्र मानों भये घर घर नित्य ठांये ढ़ाव ।
नंद द्वारे भेट लै लै उमग्यो है गोकुल गांव ॥८॥
चौक चंदन पूरि कें आरती धरी सजोइ ।
कहत गोप कुमारि ऐसो मंगल जो नित होई ॥९॥
मुकुन्द के प्रभु नित्य नौतन करौ भोग विलास ।
देखि ब्रज की संपदा यह फूल्यो है माधौ दास ॥१०॥

—❀०❀—

हों जु गई दधि बेचन ब्रज में उलटी आपु बिकाईरी ।
बिन ग्रथ मोल लई नंद नंदन सर्वसु लिखि दै आईरी
सांकरी गली जाति वे आबत भई अचांनक भेंटारी ।
सांवरे बरन कमल दल लोचन पीतांबर कटि फेंटारी ॥
निसि बासर मेरी फलकनि लागति ग्रह अंगना न सुहाईरी ।
नगर बगर की सगरी कोऊ नंद के लाल मिलाईरी ॥
कर गहि बैद ठटोरन लाग्यौ चिंता रोग बताईरी ।
माधौ दास चिंता तब बिसरैं जब चिंतामनि पाईरी ॥

—०—

हमारें गोरस दान न होइ मोहन लाडिले हो ।
हमारे में मत फिरत गुवाल ग्वालनि दधि छाडिदैं ॥
कब के तुम दानी भये हो कब कब लीनों दान ।
गाइ चरावौ नंद की तुम भये अनोखे कान्ह ॥
हम दानी तिहूलोक के हो चारयौ जुगनि मझार ।
दान निवेरों आपनो तेरो गहनें राखौं हार ॥

रतन जटित की मूंदरी हो गज मोतिन कौ हार।
ताकौं राखत कहत हो कमरी के ओटन हार ॥
ब्रह्मा तानौ पूरियौ अरु चुनियो वैठि महेस।
सो हम ओढ़ें कांमरी ताकौ पार न पावै सेस ॥
कहा बनावत चातुरी अरु बोलत अटपटे बोल।
हार है मेरौ करोरि को तेरी सब गैयानि को मोल ॥
ए गईयां तिहुं लोक तारनी पूरन सब बिधि काम।
दूध दही तिहूं लोक कौ तेरौ हार लहै नौ दाम ॥
बृंदाबन क्रीडा करी कीनौं रास बिलास।
सुर नर मुनि जै जै करै जन गावै माधो दास ॥

गोपी नंदराय गृह फगवा मागन आई।
प्रमुदित करत कुलाहल गाबत गारि सुहाई ॥१॥
तिनि में मुख्य राधिका लागति अति सुखदाई।
अवला येक अगमनी आगैं दई है पठाई ॥२॥
यशमति अति आदर कियौ भीतरि भुवन वुलाई।
खेलहु हसऊ निशंक शंक मान हु मति काई ॥३॥
वहु मोल मणिमाल देहौं सबहिनि मन भाई।
मणिमाला लै कहा करैं मोहन देहु दिखाई ॥४॥
बिन देखें सुन्दर मुख नाहिन परत रहाई।
मात पिता पति सुत गृह लागत विष समताई ॥५॥
सुनि करि प्रेम बचन दामोदर दई दिखाई।
घर में ते घनश्याम भुजा गहि भामिनि लाई ॥६॥
रही बृजबधू निहारि रंक मान हु निधि पाई।
अरगज चंदन बंदन चहूँ दिश तैं लै धाई ॥७॥

भरति भावती श्यामहि करनि कनक पिचकाई।
मंडित करहिं कपोल येक अरगज लपटाई ॥८॥
कुच विच माची कीच अतिश्रम की झपकाई।
अतिरस भरी ब्रजसुंदरि नहीं सम्हराति सम्भराई ॥९॥
यशमति अति प्रफुलित भई सुंदरि सब पहिराई
पटांवर बर भूषण चोली दिव्य मगाई ॥१०॥
इहि मेरै गृह अंगण आवहु री नित्य माई।
श्रवण नैन सुख भयौ लाल की कीर्त्ति गाई ॥११॥
निकसि देत असीस चिरजीव हु मोहन राई।
इहि बिधि माधबदास रहौ नित्य नंद दुहाई ॥१२॥

हो हो होरी खेलै। एसें नंद को नंदन वोले।
ग्वाल बाल संग लीयें। ब्रज की वीथिन डोलै ॥१॥
सोभित हैं सखा साथ सोंधे में भीनें।
बरन बरन सब सुगंध पोंटलि भरि लीने ॥२॥
बाजत ताल पखाबज आवझ भेरी सहनाई।
हलधर डफ मोहन मुख मुरलिका सुहाई ॥३॥
कंचन कमोट विविध अरगजा भराए।
जोई मिलैं वीथिनि में ताही के सिर नाए ॥४॥
खेलत खेलत हारें वृषभान जू कें आए।
निरखि मोहन मंडली उनि सवनि नेंन सिराए ॥५॥
सुनत वचन गृह गृह तें निकसी सब गोपी।
कंचन की मूरति मानों चंदन सें ओपी ॥६॥
निकसि निकसि टाढ़ी भई अपनी अपनी खिरकी
चोबा चंदन अरगजा लै छैल छवीले छिर की ॥७॥

झुंडनि झुंडनि ठाढ़ी भई सोभा बहु बाढ़ी।
लाल मनियां खोलि मानों पिंजरनि तें काढ़ी ॥८।
सबै सुघरि सबै चलरि सबै बैंस किशोरी।
सबै नवला एक रूप डार की सी तोरी ॥६॥
जरा-इकी जेहरि पग केहरि कटि खीनें।
इनि ही तौ आदि राज मोहन बस कीनें ॥१०॥
मोतिनि के हार हियें अतलस की चोली।
एई तो वा दिना उहि बंसी बट बोली ॥११॥
केसरि को तिलक दिये बेसरि गजमोती।
नव निकुंज काल्हि मिलीं एई वे होती ॥१२॥
मानों काम कारीगर जरयौ जराइ तरीना।
चूनी चहुं ओर गोपी मध्य गुपाल न गीना ॥१३॥
रंग भरी अनुराग डोले सबै गोप कुमारी।
अंचल पट ओट दिये देति लाल ही गारी ॥१४॥
अरुन वरन कंचुकी तन नील बरन सारी।
दीजै क्यों गारी हरि प्यारे की प्यारी ॥१५॥
रतन जटित पिचकरा कर कुंकुमा सों भरहीं।
तकि तकि हरि छिरकत वे ओट अंचल करही ॥१६॥
नील पीत अंचल लैं गांठि सखिनी जोरी।
हसत स्यामल जाति स्यामा पट झक झक झोरी ॥१७॥
उडत लाल गुलाल विविध नब तन छवि छाजै।
जुवती जन मंडली घन दामिनी बिराजै ॥१८॥
बलि बलि बलि माधौ रसिक यह प्रसाद पांऊ।
स्यामा स्याम दंपति गुन जनम जनम गांऊ ॥१६॥

श्रीश्रीगौरगोविन्ददासबाबाजी
महाराज

आदर्शजीवनी

(श्रीश्रीगौरगोविन्ददास बाबामहाराज की जीवनी ।)

श्रीश्रीगौराङ्गविधुर्जयति

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥१॥

वन्देऽहं श्रीगुरोः श्रीयुतपदकमलं श्रीगुरून् वैष्णवाँश्च
श्रीरूपं साग्रजातं सहगणरघुनाथान्वितांश्च
साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं श्रीकृष्णचैतन्यदेवं
श्रीराधाकृष्णपादान् सहगणललिता-श्रीविशाखान्वितांश्च ॥४॥

बहु काल व्यापि यावत् शस्यश्यामला, नदीमेखला सोने के बङ्गाल के बीच में मेदिनीपुर अति प्राचीन और प्रसिद्ध स्थान है। इसी मेदिनीपुर जिले के अन्तर्गत तमलुक महाकुमार ८ कोश पूर्व दिशा में पिछलदा नाम का इतिहास प्रसिद्ध स्थान है। इसी पिछलदा स्थान से श्री गौराङ्ग महाप्रभु ने मुसलमान अधिकारी को विदा देकर पानिहाटि ग्राम में गमन किया था ।

मन्त्रेश्वर दुष्टनद पार कराइल ।
पिछलदा पर्य्यंत सेइ यवन आइल ॥

(चै० च० ।२। १६)

इस स्थान में श्री मन्महाप्रभु के प्रिय पार्षद श्रीलवासुदेव घोष की स्थापित श्री गौराङ्ग मूर्ति आज पर्य्यन्त वर्त्तमान है। ये महाप्रभु के सन्यास के पीछे गौर हीन नव द्वीप में रह नहीं सके, तब इन्होंने इस स्थान में आकर कुछ दिन निवास किया था। इस स्थान में अभी तक इनके स्मरण निमित्त प्रत्येक वत्सर

অতঃপর প্রীতি
তোমার অভিনন্দন জানায়
[illegible]

श्रीश्रीराधारमणो जयति

श्रीरामशिष्यं कटके सुजन्मं पौगण्डकाले गुरुसान्निधाप्तम् ।
गौरोदयोर्व्यां परियान्तमाशु श्रीकृष्णदासं प्रणमामि नित्यम् ।।१

गौराङ्गदासादिभिरुन्मदेन वृन्दावने वासकृतं सहर्षम्।
भावानुरागेण वदन्तमुच्चैः श्रीकृष्णदासं प्रणमामि नित्यम् ।।२

गौडीयभक्तै रचिता रसाढ्या उद्दीपिता ग्रन्थवरा हि येन ।
साहित्यरत्नं ब्रजभूषणं तं श्रीकृष्णदासं प्रणमामि नित्यम् ।।३

विज्ञैः समेतं सुमनःसरस्स्थं ग्रन्थानुलेखं परिशोधयन्तम् ।
सद्भक्तिसिद्धान्तनिधिं सनिष्टं श्रीकृष्णदासं प्रणमामि नित्यम् ।।४

सौम्यं कृपालुं मधुभाषकण्ठं शुक्लाम्बरं क्षीणतनुं नितान्तम् ।
निःसङ्गमानन्दवपुं महान्तं श्रीकृष्णदासं प्रणमामि नित्यम् ।।५

लीलास्मरन्तं सततं जपन्तं देवाग्र उन्मत्तपरं नटन्तम् ।
संकीर्तनामोदमोदं प्रसिद्धं श्रीकृष्णदासं प्रणमामि नित्यम् ।।६

भक्ताधरोच्छिष्टललातिचित्तं स्नेहाभिमूर्तिं चलनातिधीरम्
भक्तानभक्ताञ्च नमन्तमुत्कं श्रीकृष्णदासं प्रणमामि नित्यम् ।।७

रोमाञ्चकम्पाश्रुतरङ्गयुक्तं मुग्धं प्रशान्तं नितरां हसन्तम् ।
वैराग्यसिन्धुं करुणैकबन्धुं श्रीकृष्णदासं प्रणमामि नित्यम् ।।८
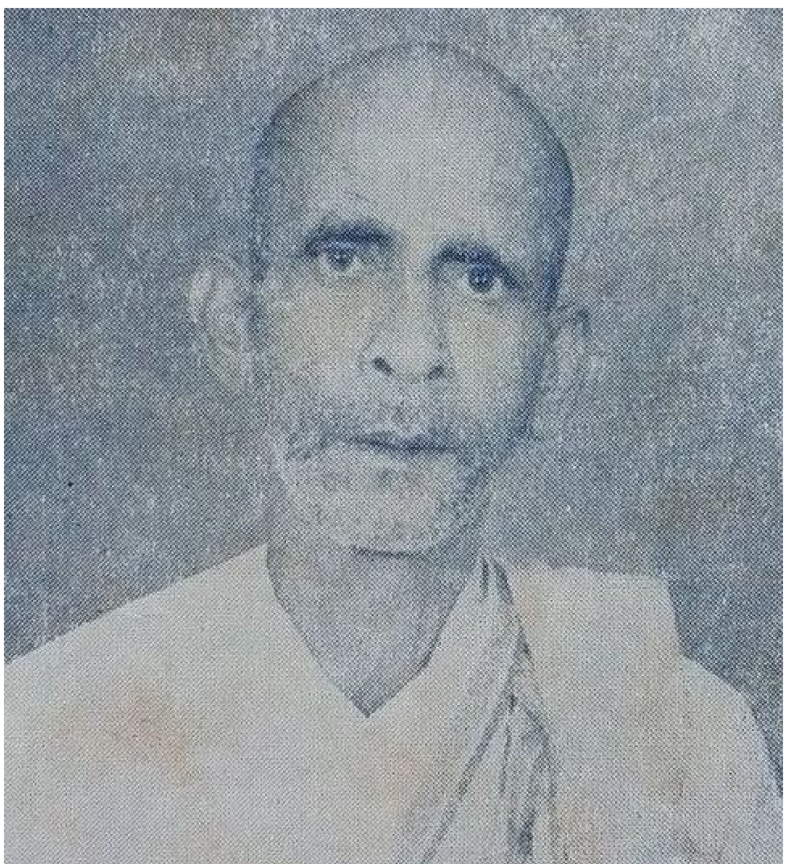
इति श्रीश्रीवृन्दावननिवासिना श्रीश्रीवृन्दावनदासेन विरचितं
श्रीश्रीकृष्णदासाष्टकं सम्पूर्णम्